RNI No. MPHIN/2017/73838

1998 से निरंतर प्रकाशित

वर्ष-1, अंक-4, फरवरी-मार्च 2018 ₹ 25/-

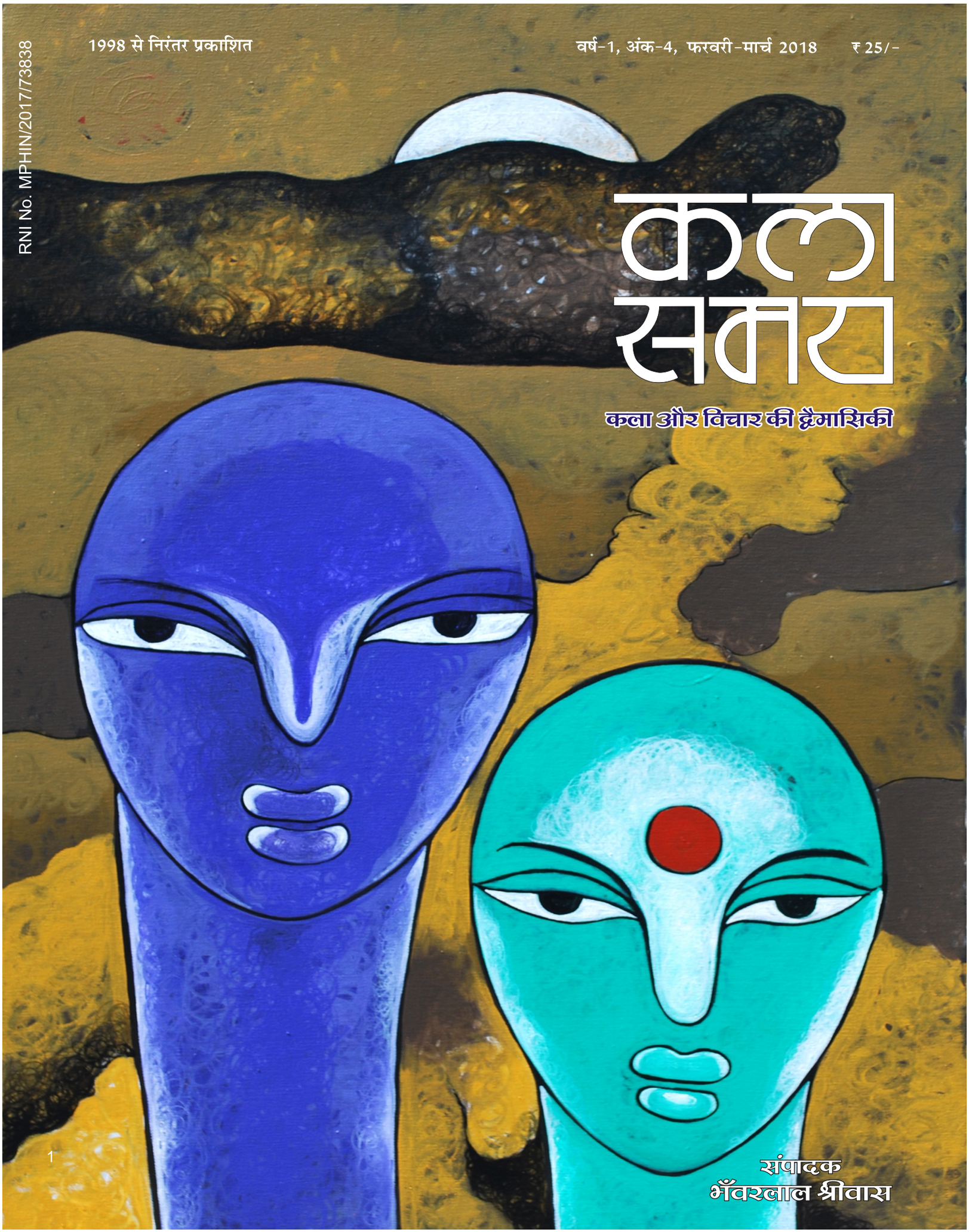

कला समय

कला और विचार की द्वैमासिकी

संपादक
भँवरलाल श्रीवास

D83154

श्री नरेन्द्र मोदी
प्रधानमंत्री

श्री शिवराज सिंह चौहान
मुख्यमंत्री

भावांतर भुगतान योजना

चना, मसूर, सरसों और प्याज के लिए

पंजीयन की अंतिम तिथि 24 मार्च, 2018 और खरीदी की तिथि 26 मार्च से 15 जुलाई, 2018

लहसुन के लिए पंजीयन 31 मार्च, 2018 तक

प्याज का विक्रय मंडी में 16 मई से 30 जून, 2018 तक

प्याज की भंडारित मात्रा का मंडी में विक्रय 01 अगस्त से 31 अगस्त करने पर भावांतर भुगतान का लाभ

भावांतर भुगतान योजना में फसलों का पंजीयन 3500 प्राथमिक कृषि सहकारी समितियों और मंडियों में

ऑनलाइन पंजीयन www.mpeuparjan.nic.in

- प्रदेश के ज्यादा से ज्यादा किसानों को रबी 2017–18 में भावांतर भुगतान योजना अंतर्गत चना, मसूर, सरसों एवं प्याज में भावांतर का लाभ उपलब्ध कराने हेतु समस्त प्राथमिक कृषि सहकारी समितियों एवं कृषि उपज मंडी समितियों के स्तर पर नि:शुल्क पंजीयन की अवधि दिनांक 12 मार्च 2018 से बढ़ाकर **24 मार्च 2018** की गई है।
- इसके अतिरिक्त लहसुन में भावांतर का लाभ लेने के लिए 20 जिलों की प्राथमिक कृषि सहकारी समितियों तथा मंडी समितियों के स्तर पर नि:शुल्क पंजीयन की अवधि **15 मार्च 2018 से 31 मार्च 2018 तक** है।
- किसान भाइयों को फसल भंडारण सुविधा उपलब्ध है। भंडारण का पूर्ण भुगतान शासन करेगा। भुगतान की राशि सीधे खाते में जमा होगी।
- भंडारित फसल मात्रा के मूल्य का 25 प्रतिशत बिना ब्याज ऋण सुविधा सहकारी बैंकों के माध्यम से।
- सभी किसान भाईयों से आग्रह है कि उपरोक्त छह कृषि उपज में से आपके द्वारा उत्पादित फसलों के लिये योजना में नि:शुल्क पंजीयन करवाकर योजना में निर्धारित विक्रय अवधि के दौरान उपज को मंडी प्रांगण में विक्रय कर प्रतिस्पर्धात्मक मूल्य के अतिरिक्त भावांतर का भी लाभ प्राप्त करें।
- किसान भाई उपज बेचने में जल्दबाजी न करें, इसके लिए पर्याप्त समय है।

मध्यप्रदेश जनसम्पर्क द्वारा जारी

आकल्पन : म.प्र. माध्यम/2018

भावांतर राशि भुगतान–मिले फसल का पूरा दाम

/CMMadhyaPradesh /CMMadhyaPradesh

RNI NO. MPHIN/2017/73838

(वर्ष : 20+1) पूर्णांक-91,
वर्ष-1, अंक-4, फरवरी-मार्च 2018

माधवराव सप्रे समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान, भोपाल द्वारा पुरस्कृत

कला समय

कला और विचार की द्वैमासिकी

❋
संरक्षक
नर्मदा प्रसाद उपाध्याय
94250 92893

❋
परामर्श

राग तेलंग
9425603460

❋
ललित शर्मा
98298 96368

❋
विशेष प्रतिनिधि
गोपेश वाजपेयी
94243 00234

❋
कानूनी सलाहकार
जयंत कुमार मेंढे (एडवोकेट)

संपादक
भँवरलाल श्रीवास
bhanwarlalshrivas@gmail.com
94256 78058

सह संपादक
लक्ष्मीकांत जवणे
laxmikantjawney@gmail.com
99936 22228

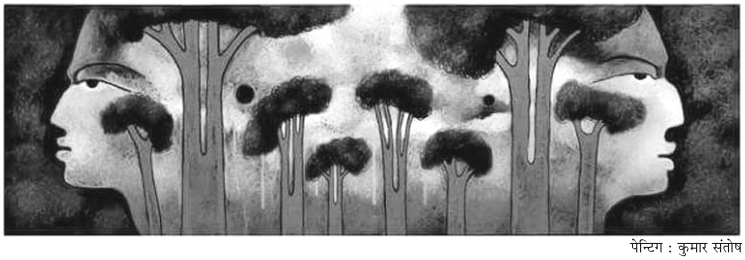

पेन्टिंग : कुमार संतोष

संपादक मंडल

सजल मालवीय साहित्य
हरीश श्रीवास कला
नरिन्दर कौर प्रबंध

सदस्यता शुल्क

वार्षिक	: 150 /-	(व्यक्तिगत)
	: 175 /-	(संस्थागत)
द्वैवार्षिक	: 300 /-	(व्यक्तिगत)
	: 350 /-	(संस्थागत)
चार वर्ष	: 500 /-	(व्यक्तिगत)
	: 600 /-	(संस्थागत)
आजीवन	: 5,000 /-	(व्यक्तिगत)
	: 6,000 /-	(संस्थागत)

(कृपया सदस्यता शुल्क ड्राफ्ट/मनीआर्डर द्वारा कला समय के नाम से उक्त पते पर भेंजे)

संपादकीय एवं सदस्यता सहयोग संपर्क -
जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर,
अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016
फोन : 0755-2562294, मो.-94256 78058
ई-मेल : kalasamaymagazine@gmail.com

आनलाइन सुविधा 'कला समय' का बैंक खाता विवरण
ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स की शाखा **(IFSC : ORBC0100932)** में **KALA SAMAY** के नाम देय, खाता संख्या **A/No. 09321011000775** में नगद राशि जमा कराने के बाद रसीद की फोटोकॉपी अपने पूर्ण पते के साथ हमें भेज दें।

कला समय पत्रिका में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं, यह जरूरी नहीं कि संपादक, प्रकाशक, मुद्रक उनसे सहमत हो। पत्रिका से सम्बन्धित समस्त विवाद, भोपाल, न्यायालय के अधीन ही रहेंगे।
सम्पादन, संचालन, प्रबंधन एवं प्रकाशन- अवैतनिक/ अव्यवसायिक

विशेष नोट : © सर्वाधिकार सुरक्षित 'कला समय' प्रबंधन यह स्पष्ट करना आवश्यक समझता है कि 'कला समय' में प्रवेशांक फरवरी-मार्च 1998 से लेकर अब तक प्रकाशित होने वाली समस्त सामग्री या सामग्री के अंश के पुनर्प्रकाशन तथा पुनरुत्पादन के सर्वाधिकार कॉपी राईट अधिनियम के अंतर्गत 'कला समय' के पास सुरक्षित हैं। अत: कोई भी व्यक्ति या संस्था 'कला समय' की इस सामग्री या इस सामग्री के अंश का उपयोग प्रबंधन की पूर्वानुमति के बिना ना करें।

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वत्वाधिकारी भँवरलाल श्रीवास द्वारा दृष्टि ऑफसेट, 36-37, प्रेस काम्पलेक्स, जोन नं-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक- भँवरलाल श्रीवास

प्रेम की श्रुति व स्मृति

कुमार संतोष की पेंटिंग्स वस्तुत: 'राधाकृष्ण-अध्यात्म' की वह श्रुति व स्मृति है जो आज के आम आदमी के निश्छल प्रेम की भाव भंगिमा में दोहराव पा रही है, अपनी समस्त तीव्रता और आवेग के साथ परंतु उन्माद के विरूद्ध प्रेम की विमलता का प्रयोग करते हुये- -सह संपादक

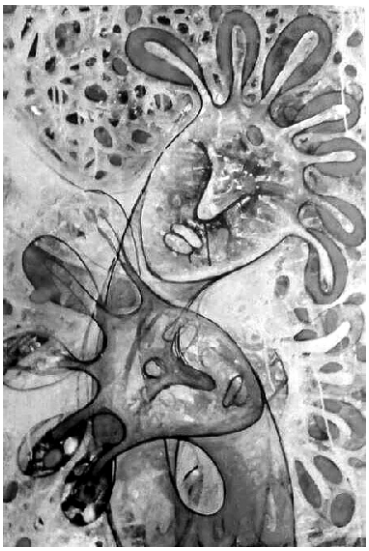

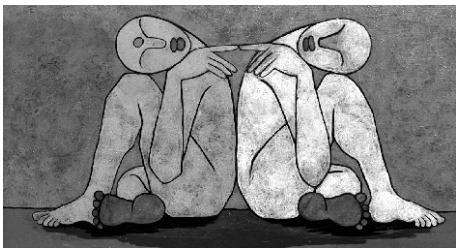

इस बार

- संपादकीय
  कला और कलाकारों को समर्पित-कला समय संस्था/5
- कला निकष
  लक्ष्मीकांत जवणे /6
- संगीत क्लासिकल और कंटेम्प्रेरी
  मेवाती घराने के मशहूर सितार वादक उस्ताद सिराज खान से विनोद नागर की बातचीत /8
- **लेखक-व्यंग्य चित्रकार निर्मिश ठाकर से हरीश नवल की वार्ता /19**
- क्षरण (कहानी)
  पद्मश्री मालती जोशी /16
  (कथा मध्यप्रदेश से)
- युग जीवन की अन्तर्वेदना 'सहमा हुआ घर' (समीक्षा)
  डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र /23
- परकाया प्रवेश
  विश्व कविता : शुन्तारो तानिकावा की कविताएँ, अनुवाद : मणि मोहन/26
- **मयंक श्रीवास्तव के दो गीत / 27**
- **संतोष जैन की दो ग़ज़लें /28**
- **राधेलाल बिजघावने की कविता /29**
- व्याख्यान : एक
  नर्मदाप्रसाद उपाध्याय /30
- व्याख्यान : दो
  मनोज श्रीवास्तव / 31
- व्याख्यान : तीन
  पद्मश्री रमेशचन्द्र शाह/ 34
- संगीत और कला सभ्य और सांस्कृतिक समाज के प्राणतत्व हैं
  पं. किरण देशपांडे
- स्मृति शेष
  देवीलाल बापना, नागजी पटेल, श्रीदेवी, प्यारेलाल वडाली, केदारनाथ सिंह/38
- समवेत (सांस्कृतिक समाचार)/40

- कुमार संतोष

आवरण : चित्रकार
जन्म : 02-02-1981
पिता व मार्गदर्शक : डॉ. लाल रत्नाकर
शिक्षा : एम.एफ.ए. (पेंटिंग) चंडीगढ (यू. टी.)
चित्र प्रदर्शनियाँ : गाजियाबाद, नई दिल्ली, हैदराबाद, अमृतसर, मुजफरनगर
अवार्ड : स्टेट ललित कला अकादमी लखनऊ
प्रकाशन : हंस, अमर उजाला, गीताभ काव्य संग्रह इत्यादि।
सम्पर्क-आर 24, राजकुंज राजनगर गाजियाबाद (यू.पी.) 291002
मो.-099681 19888

राष्ट्रीय कालिदास सम्मान से सम्मानित कलाकार/ कला समय की दस्तक विदिशा में / कलागुरु पद्मश्री डॉ. वाकणकर पर केन्द्रित पुस्तक का लोकार्पण/ मध्यप्रदेश के वयोवृद्ध साहित्यकार डॉ. देवेन्द्र दीपक को दिल्ली में मिला 'संत रविदास सम्मान'/ ''कोटा की मूर्तिकला परम्परा'' का विमोचन/ 'राजर्षि संत पीपाजी' पुस्तक का विमोचन/ होली के रंग आपके संग/ 'एक ब्रश राष्ट्र के नाम' : अतिथि चित्र प्रदर्शनी/ संस्कृति पर्व-2, कला समय संस्था का प्रतिष्ठापूर्ण आयोजन/ चित्र-वीथि।

- **नन्हें कलाकारों की दुनिया/49**
- महिला प्रतिभाएँ वक्र रेखाओं में
  निर्मिश ठाकर/50

शब्द संयोजन एवं आकल्पन - **शिवम् ग्राफिक्स**, वाट्सएप नं.-07974917691, **आवरण चित्र** - कुमार संतोष, **छायाचित्र** - मनीष सराठे, **रेखांकन** - राधेलाल बिजघावने, मदनलाल मालवीय **सहयोग** - राहुल, धनसिंह,

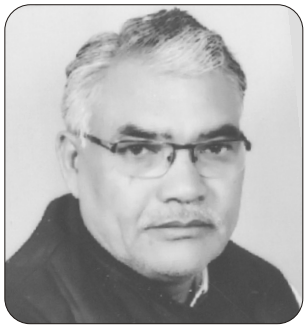

कला और कलाकारों को समर्पित– कला समय संस्था

कला समय, संस्कृति, शिक्षा, और समाज सेवा समिति, भोपाल; यह नाम एक संस्था के लिए 20 वीं सदी की गंध देता है परन्तु गौर करे, यह गंध बंद तहखानों की सीलन वाली गंध नहीं है। यह चंपा, चमेली, रातरानी और गुलाब की तरह है, जो नए पुराने की छाप से दूर है।

यह कला के विचारों और कलाकारों की भावनाओं की तिजोरी की भूमिका में हैं। हम अपनी खुशी आपके साथ बाँट रहे हैं कि कला समय पत्रिका की इस सहभागिनी संस्था ने गरिमा के साथ अपने पांच वर्ष पूरे किये हैं।

इन पांच सालों में हम जिनसे रूबरू हुए हैं, उनमें से कई बुजुर्गों ने हमें माता–पिता का एहसास करवाया, कुछ बहन–भाई और भरोसेमंद दोस्तों की तरह हमारे लक्ष्यों की ओर हमें इस रास्ते पर लेकर चले हैं।

ये सब कला समय के मंच से हमें आशीर्वाद देते रहें, दे रहे हैं, देते रहेंगे, इनका नाम लेकर ही अपार हर्ष हो रहा है शब्दों के तपस्वी पद्मश्री रमेशचंद्र शाह, मनोज श्रीवास्तव, नर्मदा प्रसाद उपाध्याय, राजेश जोशी, मंगलेश डबराल, डॉ. देवेन्द्र 'दीपक', राधेलाल बिजघावने, विनय राजाराम, पलाश सुरजन, प्रेमशंकर शुक्ल, विनय उपाध्याय, कंठ की धनी नगीन तनवीर, सवा गुंजी, संगीता गोस्वामी, सुर और ताल के फनकार पंडित किरण देशपांडे, उस्ताद सिराज खान, उस्ताद असद खान, मनोज पाटीदार, रामेन्द्र सोलंकी, रोमन दास, नितेश मांगरोले, रंगों के चितेरे प्रोफ़ेसर राजाराम, रमेश जैन 'नूतन', सुन्दरलाल प्रजापति, डॉ. मुक्ति पाराशर, अभिनय के साधक जयंत देशमुख, पापिया दासगुप्ता, संजय मेहता, सरोज शर्मा, अनूप जोशी 'बंटी', सौरभ अनन्त, उद्घोषक पिंकी तिवारी, नेपथ्य से बागडोर सम्हालने वाले लक्ष्मीकांत जवणे, सजल मालवीय, डॉ. दौलत राव वाढ़ेकर, राग तेलंग, विश्वजीत चौहान आदि ।

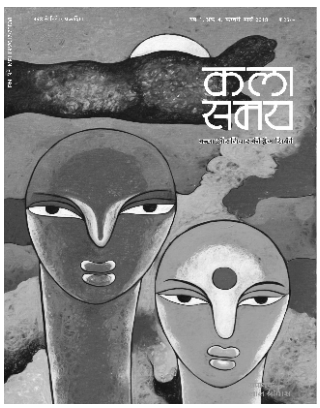

इस संस्था की आयोजनात्मक गतिविधियों ने बाल समर कैंप, आरोही, छवि–संवाद, संस्कृति पर्व –1, संस्कृति पर्व –2, अतिथि चित्र प्रदर्शिनी 'एक ब्रश राष्ट्र के नाम' ने सुधिजनों से खूब आशीर्वाद और मंगलकामनाएं पाई।

संस्था के इस मुकाम पर हमें मजबूती से खड़ा हो पाने में हमारी ऊर्जा और हमारी प्राणवायु के स्रोत रहे हैं म.प्र. शासन, संस्कृति विभाग; भारत भवन, स्वराज संस्थान, मधुवन, अभिनव कला परिषद्, वनमाली सृजन पीठ, आईसेक्ट विश्व विद्यालय, सुबह सवेरे, पहले पहल, दुष्यंत संग्रहालय, शिवम् पूर्णा, संकल्प रथ, इफ्तेखार अकादमी, रंग विदूषक, लिटिल बेले ट्रुप, हाड़ौती आर्टीजन डेवलपमेंट सोसायटी (कोटा–राजस्थान)।

आज 'कला समय संस्था' अपनी जननी 'कला समय पत्रिका' के साथ आपके आत्मीय साहचर्य, सहभागिता, सहकार और समग्र–साथ के लिए अंतर्मन से आभारी हैं।

– भँवरलाल श्रीवास

कला निकष

संवेदना, अनुभूति, स्मृति और पाठक की समझ

हम हिंदुस्थानी ....रुकिए मैं हिन्दुस्तानी नहीं हिंदुस्थानी कह रहा हूँ;
हिमालयं समारभ्य यावदिंदुसरोवरम् ।
तं देवनिर्मितं देशं हिन्दुस्थानं प्रचक्ष्यते ।।
(हिमालय से इंदु सागर तक की देव निर्मित धरा हिन्दुस्थान कहलाती है ।)

मैं संवेदना की बात से शुरू करता हूँ, बिना 'संवेदना' या उसके 'समानार्थी शब्द' से। शायद, नीचे लिखी पंक्तियों से अपने मंतव्य को आपके मन में टटोल पाँऊ.....।

हम हिंदुस्थानी देवी देवता बनाने के शुरू से संस्कारी हैं, यह हमारा 'कल्ट' सा है। सूर्य(सविता),वरुण,पवन से ब्रह्मा, विष्णु और शिव, सरस्वती, लक्ष्मी और पार्वती। काल, धरती राम, कृष्ण। महावीर, बुद्ध। गांधी। पीर पैगम्बर। मंदिर और मजारे। नदी पहाड़। पेड़ पशु।.....।

हमारे देवता अमर होने से लेकर स्वच्छ होने तक का वरदान देते हैं।

प्रक्रिया यूं होती है, हम प्रतीक का अपने भावों से रेखांकन करते हैं, उसमें उत्साह, प्रेरणा, करुणा, दयालुता, शक्ति, ऊर्जा आदि आदि जैसे भावों की अपनी ही समझ को रंग और मिट्टी बनाकर लबालब भर देते हैं। ये रंग और मिट्टी गतिमान है वैसे ही जैसे जमीन पर स्थिर मनुष्य पृथ्वी की गति की दर से गतिमान है। चूंकि गतिमान है इसलिए उसमें बल (फ़ोर्स) है। वे सारे रंग और मिट्टियाँ जिस मात्रा में थे, उसी मात्रा में प्रतीक से न्यूटन के तीसरे नियम के अनुसार लौटते हैं, हम उनके सामने खड़े हो जाते हैं तो वे उत्साह, प्रेरणा, करुणा, दयालुता, शक्ति, ऊर्जा हमें मिल जाते हैं। इस मिलने को हम वरदान और बीच में खड़े होने को पूजा कहते हैं। दिलचस्प बात यह है कि हमें मिलने के बाद ये हमारे पास रुक नहीं जाते हमसे टकराकर फिर प्रतीक में वापिस हो जाते हैं। यह आने-जाने का क्रम अनवरत है इसीलिये हमारे देवी देवता और हम अमर हैं।

हमारी भारत माता हमारी नवीनतम देवी है जो भारतवर्ष को देवता में बदलने की संभावना से आगे निकल गयी। आज हमारी यह देवी हम सब में अनंत ऊर्जा का संचार करने के लिए सबसे जाग्रत देवी है।

तात्पर्य यह है कि चाहे शिवलिंग हो या अनगढ़ सिंदूरी पत्थर या भारत माता ये हमारी आर्ट की समझ में 'रियल' और 'एबस्ट्रेक्ट' दोनों की अवधारणाओं की बजाय अनुभूतियों का श्रेष्ठतम प्रतिनिधित्व करते हैं।

इसे पढ़कर मन में यदि तरंग हुई और ऊपर से सम्बंधित सामान्य ज्ञान की भी जानकारी रहे तो तरंग हिलोर भी बन सकती है। इस तरंग या हिलोर का जो कारण हैं, वह 'संवेदना' हैं, आपके भीतर की, जो आपको अनुभूत हो रही है।

अब 'संवेदना' के बाद 'अनुभूति' समझने के लिए अपने नीचे हुए 'अनुभव' का सहारा लेता हूँ।

भक्तिकाल की एक बात मेरी समझ में आई कि संत अपने किसी साज या बाजे के साथ, चाहे इकतारा, सारंगी, खंजरी, डफली या खड़ताल मंजीरे कुछ भी हो, मगन हो कर अपनी रचना गाते थे, नाचते थे। गान और नृत्य के साथ रचना भजन, पद आदि के रूप में जन्म लेकर पलती और बढ़ती रही। मैं दरअसल 'संगीतबद्ध गीत' और 'गीतबद्ध संगीत' की बात कर रहा हूँ। भक्तिकाल के भजन संगीतबद्ध गीत है, गीत केन्द्र अर्थात् संज्ञा है और संगीतबद्ध उस संज्ञा का विशेषण। आज गीतबद्ध संगीत के रूप में विषय वस्तु और आकार का संतुलन चेष्टारत है।

सुर ताल और नृत्य बहिर्वर्ती (exterior) थे जबकि रचना साहित्य के रूप में अन्तर्वर्ती (interior) थी। तत्कालीन

लोगों की साहित्य या शब्दांकन के लिए आवश्यक समझ विकसित करने में संगीत की एक माध्यम के तौर पर उपयोगिता रही। लय, थाप और चाप शब्दों के मार्मिक अर्थ को ना मात्र मनुष्य के हृदय तक ले जाते रहे बल्कि उन शब्दों को हृदय के कैनवास पर चित्रों (स्मृति) के रूप में टांगते रहे। जब भी उस स्मृति चित्र को टहोका (हलके से हल्का धक्का) लगता वह उस शब्द के अर्थ खोल देता या उस शब्द के संजोये अर्थ पर फ्लैश चमक उठता।

आज के दौर में सम्प्रेषण मार्ग उलट गया है। अब साहित्य या शब्द-कर्म माध्यम है, वाहक है जो संगीत, नृत्य या किसी भी रूपंकर तथा प्रदर्शन कला के निहितार्थ तक पहुंचा देता है। शब्द-कर्म संवेदना को परिष्कृत कर रहा है, अर्थ को महसूसने की सामर्थ्य में इजाफा कर रहा है।

संवेदना, अनुभूति के बाद 'स्मृति ' की बात आती है-

जैसे, 'शिवलिंग' से पुराना कोई 'एब्स्ट्रेक्ट आर्ट (अमूर्त कला) ' भारतीय स्मृति में है ही नहीं पर उस प्रदर्शनीय शिल्प (exhibit) ने 'शिव' और 'शिवत्व' के भारतीय स्मृति में व्यापक आयाम स्थापित किये हैं। आज, समकालीन समझ 'शिव' और 'शिवत्व' पर 'शिवलिंग' को कोई नया सा अनूठा सा रूपाकार गढ़ने की पूरी संभावना रखती है।

संवेदना, अनुभूति, स्मृति के साथ 'पाठक की समझ' की भी थोड़ी सी बात करते हैं-

हमारे मतलब रचनाकार और पाठक/ प्रेक्षक दोनों के सामने 'संवेदनहीनता' की चुनौती है। संवेदनहीनता का संकट कई कारणों से है पर निजी तौर पर मेरा ध्यान अपेक्षित जानकारियों की कमी पर जाता है। इस ग्लोबल विलेज में 'सटीक, प्रभावी और प्रामाणिक' जतलाने (अभिव्यक्ति) के लिए 'सटीक, प्रभावी और प्रामाणिक' जानना भी जरूरी है। पूरब को अभिव्यक्त करने के लिए पश्चिम को खंगालना सिर्फ हमारी ही नहीं उनकी भी जरूरत है।

तर्क, रोमांस और जूनून केवल विज्ञान की ही आवश्यकता नहीं होती, कला एवं दर्शन को भी उतनी ही शिद्दत से दरकार होती है।

समकालीनता, समीचीनता, वर्तमान अथवा आज मैं अभी इन सब का प्रयोग उस समय के लिए कर रहा हूँ, जिस समय का दो पीढियां सामना कर रही है। एक वह जो अपने संचित अनुभवों पर अपना काम कर रही है या उसे हो रहे अनुभवों को अपने स्केल पर रखकर अभिव्यक्त हो रही है, दूसरी वह जो अनुभव अर्जित करते हुए व्यक्त हो रही है, व्यक्त कर रही है।

यहाँ अलबर्ट आईंस्टीन और स्टीफन हॉकिंग्स को यदि हम याद करते हैं तो अद्वैत वेदान्त तथा सांख्य को सामने रखना भी हमारी सोच के लिए बहुत जरूरी है।

अद्वैत वेदान्त की अभिव्यक्ति है ''कारण 'सत्य' होता है जबकि कार्य उसका 'विवर्त (आभासी प्रतीति) ' होता है।'' सांख्य सैद्धांतिकी स्थापित करती है कि 'कारण कार्य की अव्यक्त अवस्था है और कार्य कारण की व्यक्त अवस्था।'
दूसरे सन्दर्भ बिंदु पर आईंस्टीन बतलाते हैं 'द्रव्यमान और ऊर्जा एक ही वस्तु के दो भिन्न रूप हैं।' 'समय और अंतरिक्ष (काल व स्थान) एक दूसरे से जुड़े हुए हैं, इन्हें अलग नहीं किया जा सकता है। विज्ञान में इसे एक साथ 'काल-अंतराल' परिभाषित किया गया है।' आगे हॉकिंग्स विस्तार देते हैं 'विज्ञान केवल तर्क का अनुयायी नहीं है बल्कि रोमांस और जूनून का भी।' आगे 'ब्लेक होल के भीतर से निकल आना संभव हो सकता है।' (ब्लेक होल कोई छेद नहीं है, ये मरे हुए तारों के अवशेष हैं, जिनका गुरुत्वाकर्षण धरती या जिन्दा तारों से कई कई गुना अधिक है।)

हमारे समय का यथार्थ ; भारतीय मनीषा के प्राचीनतम सन्दर्भ बिंदु (हमारे पारम्परिक मिथक व बिम्ब) और वैश्विक मेधा के नवीनतम सन्दर्भ बिंदु(आधुनिक समस्त दर्शन, कला और विज्ञान की नवीनतम स्थापनाएँ),दोनों हैं। हमारी सोच का आसमान यदि इसे श्यामपट माने ले तो लिखने के लिए बहुत विशाल पटल है। यहाँ लिखने से अभिप्राय कला की समस्त विधाओं में अभिव्यक्ति से है ।

मैंने संस्कृति पर्व के निमंत्रण पत्र में 'सुर और ताल में देह को आत्मा तथा आत्मा को देह बनाने की जादूगरी है', इसे सुर-ताल की जगह 'कला' शब्द को रखकर देखने का आप सुधिपाठकों से मेरा निवेदन हैं, शायद मेरा अभिप्राय पूरा हो जाए.....।

धन्यवाद

- लक्ष्मीकांत जवणे
laxmikantjawney@gmail.com
M- 099936 22228

साक्षात्कार

देखिये, भारतीय अस्मिता में शास्त्रीय संगीत का स्थान शाश्वत है इसमें नया पुराना जैसा कुछ नहीं होता, ये सदियों से अपनी जगह पर अपने मूल स्वरूप में विद्यमान है..अटल है। हाँ, आधुनिकता और बदलती तकनीक के मान से प्रस्तुतियों के परिवेश में कुछ तब्दीली आई है; पर वह समयोचित है।

संगीत, क्लासिकल और कंटेम्प्रेरी

मेवाती घराने के मशहूर सितार वादक उस्ताद सिराज खान से विनोद नागर की बातचीत

सितार के तारों को सहलाकर फिर मचलकर उनकी उंगलियाँ जब राग 'विहाग' छेड़ती हैं तो स्वर लहरियों की झंकार सुधि श्रोताओं के कानों से होकर सीधे दिल की गहराइयों में समा जाती हैं। देखते ही देखते पिता-पुत्र की जोड़ी सितार की जुगलबंदी में तल्लीन हो जाती है और वातावरण में घुलने लगता है नाद ब्रह्म का अद्‌भुत आल्हाद, बगैर किसी एन्करीय हस्तक्षेप के चरम पर पहुंचकर जब कलाकार द्वय सांगीतिक प्रस्तुति की पूर्णाहुति के साथ सभागार में उपस्थित कला रसिकों का नमन करते हैं तो तालियों की गड़गड़ाहट कलाकारों और कला के प्रति जिस सम्मान को प्रकट करती है वह किसी पद्मश्री अलंकरण से कम नहीं होता। प्रस्तुति के उपरांत मेवाती घराने के शीर्ष सितारवादक उस्ताद सिराज खान और उनके होनहार पुत्र असद खान मंच से नीचे आकर उत्साहित श्रोताओं के साथ पूरी विनम्रता से हाथ में हाथ लेकर बतियाने/ मुस्कुराते हुए सेल्फी खिंचवाने में अपार संतोष अनुभव करते हैं। सचमुच ऐसे लम्हें भारतीय संगीत की सच्ची आराधना से पोषित संस्कारों से साक्षात्कार कराते है।

- विनोद नागर
वरिष्ठ लेखक तथा धारदार फिल्म समीक्षक। आकाशवाणी-दूरदर्शन में रीजनल न्यूज हेड रहे हैं।

हम मध्यप्रदेश वालों के लिए तो यह गौरव की बात है कि मेवाती घराने की समृद्ध विरासत को शिद्दत से आगे ले जाने वाले सितारवादक उस्ताद सिराज खान मूलत: इन्दौर के हैं, इन्दौर में गुजरे अतीत के स्मृति झरोखे से झाँकते समय अपने पूर्वजों का जिक्र करते हुए उनकी

सधी हुई आवाज़ में फ़ख्र और अदब साथ झलकता है। पेश है उनसे हुई बातचीत के अंश –

• **शास्त्रीय संगीत में घरानों की प्रतिष्ठित परम्परा रही है, क्या नई पीढ़ी इसका समुचित निर्वाह कर पा रही है ?**

– जी हाँ, मैं नई पीढ़ी से बहुत मुतमईन हूँ क्योंकि वो पूरी संजीदगी से अपने काम को कर रहे हैं चाहे वे लड़के हों या लड़कियां। सितार के बारे में तो कह सकता हूँ कि वो सुरक्षित हाथों में है। अलबत्ता गुरु शिष्य परम्परा का मूल स्वरूप विलुप्त हो जाने का असर घरानों की पहचान पर भी पड़ा है। संचार माध्यमों के प्रसार से सीखने वालों पर कई कलाकारों का समग्र प्रभाव पड़ता है। ऐसे में मौलिक शैली को बनाए रखने की चुनौती गुरु और शिष्य दोनों के सामने है। इन विषम परिस्थितियों का नुकसान घरानों के साथ-साथ श्रोताओं का भी हुआ है।

• **क्या आप शास्त्रीय संगीत में प्रयोगधर्मिता के पक्षधर हैं.... ? इससे सदियों पुरानी पारंपरिक धरोहर के मूल स्वरूप के विकृत होने का खतरा नहीं लगता आपको... ?**

– देखिये, भारतीय अस्मिता में शास्त्रीय संगीत का स्थान शाश्वत है इसमें नया पुराना जैसा कुछ नहीं होता, ये सदियों से अपनी जगह पर अपने मूल स्वरूप में विद्यमान है..अटल है। हाँ, आधुनिकता और बदलती तकनीक के मान से प्रस्तुतियों के परिवेश में कुछ तब्दीली आई है; पर वह समयोचित है। आपने प्रयोगधर्मिता की बात कही। मैं तो कहूँगा कि नए प्रयोगों से तो हर कला समृद्ध होती है पर ओरिजनल की तासीर अलग होती है। मैं अपने घर का ही उदाहरण देता हूँ, बेटे असद खान ने ए.आर.रहमान साहब के साथ काम करते हुए 'स्लमडॉग' मिलियेनर' सहित कई फिल्मों के पार्श्व संगीत में सितार बजाया है पर कभी भी उन्होंने साज के रूप में इलेक्ट्रानिक सितार या कॉर्ड सिस्टम का प्रयोग नहीं किया बल्कि हमारे ओरिजनल एकास्टिक सितार का ही उपयोग किया है और आज भी वही करते हैं।

• **पुरानी हिन्दी फिल्मों में सितार की सुमधुर धुनों से सजे अनेक गीत आज भी बेजोड़ हैं। इस लिहाज से आपको कौन से गीत और संगीतकार ज्यादा पसंद हैं ?**

– देखिये उस ज़माने में सितार करीब करीब हर म्यूजिक डायरेक्टर का फेवरेट इंस्ट्रूमेंट रहा है। वैसे तो मदनमोहन जी, नौशाद साहब, शंकर जयकिशन, लक्ष्मीकांत प्यारेलाल सभी ने अपने संगीत में सितार को भरपूर महत्व दिया है पर मदनमोहन

मेरे पसंदीदा म्यूजिक डायरेक्टर रहे हैं क्योंकि वो खुद भी सितार बजाते थे। उनकी बरसों पहले बनाई गई रागों पर आधारित धुनें आज भी अमर हैं और दिल को छू लेती हैं। याद कीजिये नन्द राग पर बने गीत 'तू जहाँ जहाँ चलेगा मेरा साया साथ होगा' को। निजी तौर पर फिल्म 'दस्तक' के सभी गीत मुझे बहुत पसंद हैं।

• **भारत में शास्त्रीय संगीत की धरोहर को सहेजकर रखने में आकाशवाणी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है पर अब जब इस सांस्कृतिक प्रसारण संगठन की प्रासंगिकता खुद हाशिये पर चली गई है; भविष्य में शास्त्रीय संगीत के राजकीय संरक्षण की क्या दशा और दिशा आपको नज़र आती है ?**

– इस बारे में मुझे एक बहुत बढ़िया जुमला याद आता है जो मैंने अपने बुजुर्गों से सुना था कि जब देश आज़ाद हुआ तो आकाशवाणी के पहले डायरेक्टर बुखारी साहब से इन्दौर के महाराजा तुकोजीराव होलकर ने एक सभा में कहा था– 'हमने संगीत को पाल पोसकर जवान कर के दिया है कहीं आप इसे बूढ़ा मत कर देना।' आज मुझे बहुत अफ़सोस के साथ कहना पड़ रहा है कि शायद परिस्थितियों ने या बदले हालात ने इसको वहां हाशिये पर तो ला दिया है, लेकिन यहाँ से हम फिर वापस उसी दौर–ए–बहार में ले जा सकते हैं यदि सब मिलकर प्रयास करें, जैसे पुराने ज़माने में छोटी–छोटी बैठकें हुआ करती थीं....रेडियो संगीत सम्मेलन हुआ करते थे....और फिर से इन्हें कोई स्पांसर करे.. हुकूमत करे या सीएसआर के तहत कोई कॉर्पोरेट इसकी जिम्मेदारी उठा लें...चाहें तो बड़े कॉर्पोरेट घराने भी इन रेडियो स्टेशनों को गोद ले लें या पालन पोषण की जिम्मेदारी लेकर उनसे कहें कि आप हमें अपने क्षेत्र की स्थानीय प्रतिभाओं/ कलाकारों का बेहतरीन प्रदर्शन सहेजकर/ प्रसारित कर के दिखाएँ....यकीन मानिए गर ऐसा हो जाए तो हमारे पास इस देश में बहुत सारा टैलेंट है और लोगों को फिर सुनने को मिल सकेगा....

भारतीय अस्मिता में शास्त्रीय संगीत का स्थान शाश्वत है इसमें नया पुराना जैसा कुछ नहीं होता, ये सदियों से अपनी जगह पर अपने मूल स्वरूप में विद्यमान है..अटल है।

• **शास्त्रीय संगीत के कार्यक्रम विदेशी धरती पर ज्यादा सफल क्यों होते हैं बर्लिन या विश्व के किसी और शहर में आपका सितार सुनने जितनी भीड़ उमड़ती है उसका आधा हिस्सा भी यहाँ के आयोजनों में नजर नहीं आता। यहाँ और वहाँ के संगीत रसिकों के बारे में आपका अनुभव क्या कहता है ?**

– आपकी बात कुछ हद तक सही है। इसका एक कारण मुझे यह लगता है कि वे अपने संगीत को सुनकर बजाकर थक चुके हैं....ऊब चुके हैं....इसलिए नयेपन की तलाश में हमारे संगीत की ओर खिंचे चले आते हैं....लेकिन विडम्बना देखिये कि हमारा देश अभी भी उनके संगीत के पीछे पड़ा है....अभी भी हमारे यहाँ गैजेट म्यूजिक, लाउड म्यूजिक, डीजे म्यूजिक से लोगों का पेट भरा नहीं है। दूसरा आपने हमारे यहाँ संगीत रसिकों की कमी का जो मुद्दा उठाया उस पर यही कहूँगा कि हमारे यहाँ संगीत रसिक लोगों की कमी नहीं है। कमी है तो अच्छे पेशेवर कार्यक्रम संयोजकों की। साथ ही कलाकारों का भी दायित्व है कि वे कार्यक्रम के प्रायोजकों के आधार पर अपनी ऊंची फीस निर्धारित करने के बजाय श्रोताओं को सर्वोपरि मानकर उनके हितों का भी ख्याल रखें जैसे कि गुजरे ज़माने में पंडित मल्लिकार्जुन मंसूर अथवा ओंकारनाथ ठाकुर जैसे महान कलाकारों ने मिसाल रखी थी।

• **आने वाले समय में शास्त्रीय संगीत की क्या दशा और दिशा देखते है आप ?**

– बड़ा कठिन सवाल है आपका पर एक बात ज़रूर कहूँगा, गाना, तबला और वाद्य संगीत में सितार का अच्छा भविष्य मुझे दिखाई देता है, लेकिन सारंगी, रूद्र वीणा सरीखे कुछ वाद्य समय गुजरने के साथ विलुप्त से हो जाएँगे क्योंकि इन्हें बजानेवाले बहुत कम लोग बचे हैं। संतूर भी बहुत कम लोग अभी बजा रहे हैं। सरोद, सितार, तबला वादन और गायन में ही मुझे ज्यादा तादाद में लोग दिखाई देते हैं, लेकिन अन्य वाद्य यंत्रों के बारे में भी हमें समय रहते गंभीरता से सोचना चाहिए ताकि नए पीढ़ी उन्हें अपनाने के लिए आगे आये।

■

साक्षात्कार

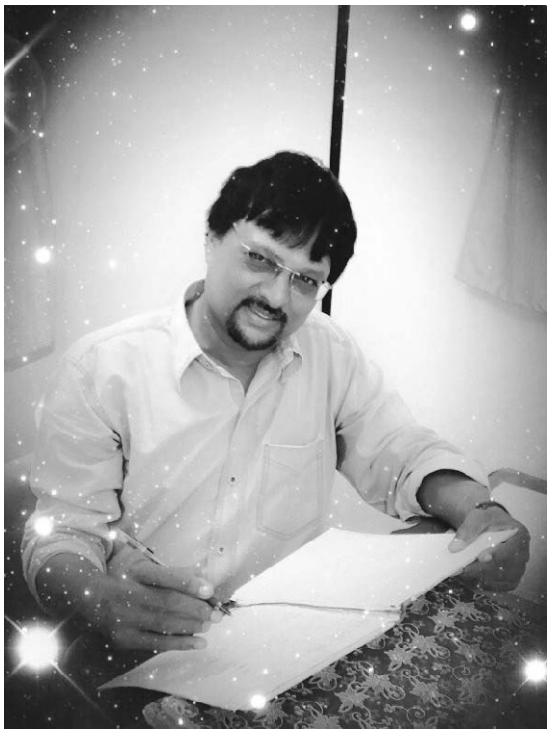

लेखक-व्यंग्य चित्रकार निर्मिश ठाकर से हरीश नवल की वार्ता

• आप राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कार्टूनिस्ट हैं अब आपके क़दम दूसरे देशों में भी जाने लगे हैं। अन्तर्राष्ट्रीयता के द्वार के भीतर प्रवेश करते हुए आपको किन दायित्वों का बोध हुआ है? (संदर्भ : आपकी हाल ही की अमेरिका यात्रा व प्रदर्शनियाँ)

– हरीश नवल
वरिष्ठ हिन्दी व्यंग्यकार तथा 'गगनांचल' पत्रिका के मानद संपादक।

– हाँ, अगस्त-2017 में केलिफोर्निया में दो जगह मेरे कार्यक्रम एवं प्रदर्शनियाँ आयोजित हो चुकी हैं। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर खासकर कॅरिकैचर प्रदर्शनियाँ बहुत कम होती हैं, तो मुझे रोमांच आना स्वाभाविक है! साथ ही साथ दायित्व का एहसास होना भी आवश्यक है कि प्रेक्षक एवं कला चाहक निराश न होने पाएं और काबिलियत की न्यायोचित सराहना हो! इसलिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के कार्टूनिस्टों की गतिविधियाँ और उनका अभ्यास भी आवश्यक हो जाता है।

• आपके मन में यह विचार कब और कैसे आया कि आप केवल राजनेताओं के नहीं बल्कि उनसे अधिक साहित्यकारों, सिनेकलाकारों, खेल प्रतिभाओं आदि के कॅरिकैचर बनायेंगे?

– सद्भागी हूँ कि स्कूल के दिनों में ही कहीं पढ़ने में आया था कि सर्जक दो प्रकार के होते हैं। एक जो डिमान्ड के अनुसार सृजन करते हैं और दूसरे वह जो अपने सृजनों से डिमांड पैदा करते हैं!

आरंभ से ही मुझे दूसरे प्रकार में रस रहा।

ज्यादातर व्यंग्यचित्रकार राजनीति पर केन्द्रित (Political) व्यंग्यचित्र बनाते हैं क्योंकि उसकी डिमांड है और उसके ही कॉलम्स चलते हैं। मुझे कुछ अलग करना था। मैं खुद तबलावादक और साहित्यकार था, तो कुदरती रूप से मेरा झुकाव साहित्य एवं संगीत की ओर था। मैंने विविध भाषाओं के साहित्यकारों के कॅरिकैचर्स बनाने आरंभ किए। तब कई नामी साहित्यकारों ने मुझे कहा कि ये समय और शक्ति का व्यय है, इन चित्रों को कोई पत्रिका छापेगी नहीं...बस बनाते जाओ और देख-देखकर खुश होते रहो! बड़ी मुश्किल से मैंने एक गुजराती प्रकाशक को मनाया और वर्ष 1996 में मेरा संग्रह ''Caricatures of gujarati men of letters'' प्रकाशित हुआ, जो मैंने व्यंग्यचित्रकार आर.के. लक्ष्मण को अर्पण किया था। वे खुद उससे अति प्रभावित हुए थे और वह समय भी आया कि उसी संग्रह का लोकार्पण भी उन्ही के शुभ

हस्तों से बडौदा में हुआ और ये समाचार मीडिया में छा गए! तब से मेरी उस प्रकार की श्रेणियाँ साहित्यिक पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगी जो आज तक जारी है...।

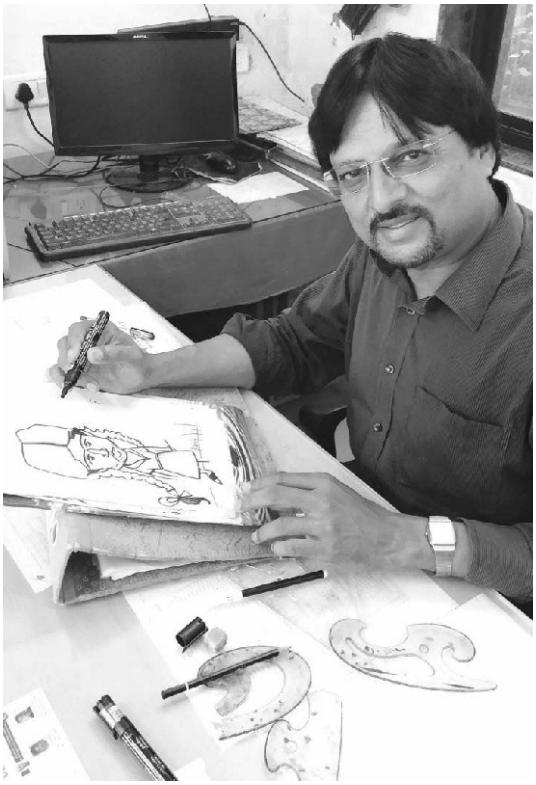

• **आपकी कार्टून रचना-प्रक्रिया क्या है? क्या आप पात्र विशेष के विषय में राय बनाने से पूर्व उनके कृतित्व के विषय में बहुत कुछ जानने का प्रयास करते हैं? आप उन विशिष्टताओं और भाव-भंगिमाओं को कैसे चिह्नित करते हैं, जिनके आधार पर कार्टून बन सके?**

– कार्टून मुख्य रूप से चित्रकला है जो व्यंग्य निष्पन्न करती है और जरूरत पड़ने पर कम से कम शब्दों का सहारा लेती है। यह कोई छोटी चुनौती नहीं है! अगर पर्याप्त विषय-ज्ञान नहीं होगा तो कार्टून सामान्य स्तर का ही बनेगा और भावक निराश ही होंगे। जहाँ तक कॅरिकैचर की बात है, जिस व्यक्तिविशेष का कॅरिकैचर आप बनाना चाहते हैं, उसके बारे में खासकर उसकी विशेषताओं के बारे में और उसकी भाव-भंगिमा के बारे में ज्ञान होना अति आवश्यक है। तभी यह संभव होगा कि किसी तरह आप वैज्ञानिक न्यूटन को सेब से जोड़कर या जवाहरलाल नेहरू को गुलाब से जोड़कर या अभिनेता मनोजकुमार को हल या तिरंगे से जोड़कर कॅरिकैचर बनायें और भावक रोमांचित हो उठे!

• **भारतीय कार्टून-निर्माण में शंकर का नाम स्वर्णाक्षरों में है, आपको उनकी किस विशेषता ने प्रभावित किया? क्या उनसे आप अपनी साम्यता किस बिन्दु पर किस रूप में कर पाते हैं अथवा नहीं कर पाते?**

– कार्टूनिस्ट 'शंकर' और उनकी कार्टून पत्रिका 'शंकर्स वीकली' के नाम लिये बिना भारतीय कार्टून कला का इतिहास लिखना संभव नहीं। ये एक बहुत बड़ा विषय है। उन्होंने अपने जमाने के अनेक राजनेताओं के कार्टून्स एवं कॅरिकैचर्स बनाए थे, खासकर नेहरू जी के! मैंने व्यवस्थित रूप से उनके बारे में अभ्यास अवश्य किया है, किन्तु हम दोनों की साम्यता मुझे कहीं नज़र नहीं आती। शायद मेरा सृजनमार्ग अलग है।

• **कार्टून किंग लक्ष्मण और कार्टून पॉपुलर सुधीर दर के विषय में धारणाएँ क्या है? क्या इनसे आपने भी प्रभाव ग्रहण किया, तो कैसे? आप दोनों से मिले भी होंगे?**

– दोनों ही विश्वस्तर के नाम है। तीक्ष्ण राजनीतिक व्यंग्य में लक्ष्मण का ज़वाब नहीं था, किन्तु चित्रांकन की बात हो तो मुझे सुधीर दर ज्यादा प्रभावित करते हैं। मेरे कार्टून सृजनों में आपको किसी अन्य कार्टूनिस्ट का प्रभाव दिखाई नहीं देगा। मैं

सद्‌भागी हूँ कि मेरी प्रथम कॅरिकैचर प्रदर्शनी वर्ष 1997 में आर.के. लक्ष्मण के शुभहस्तों से उद्‌घाटित हुई थी।

• **देश के अन्य प्रख्यात कार्टूनिस्ट जैसे शिक्षार्थी, रंगा, चो, तैलंग, आबिद सुरती, प्राण, मारियो, अबू अब्राइम, कुट्‌टी, विजयन, बाल ठाकरे, अजित नैनन, बापू, अरविंदन, इरफान, आचार्य आदि के मध्य आप स्वयं को कहाँ रखते हैं? क्या इनसे आपकी तुलना उचित होगी?**

– मैं 'निर्मिश' हूँ इतना याद रखकर मैं सृजनरत रहता हूँ, उसके अलावा मैंने कुछ सोचा नहीं। समय ही महान आलोचक है, जो भविष्य में चित्र स्पष्ट करेगा।

• **'GANPAT SURTI SAYS' जो आपका लोकप्रिय अंग्रेजी कॉलम रहा, उसे लिम्का बुक ऑफ रिकार्डस में स्थान मिला। 'गनपत सूरती' आपके जितना ही लोकप्रिय है, उसके विषय में कुछ बताएँ, उनका जन्म कैसे हुआ?**

– बचपन से ही मुझे पुस्तकालय जाने की आदत रही है। उन दिनों में भी मैं टॉम सॉयर, टिन टिन, चाचा चौधरी, मिकी माऊस आदि पात्रों से अति रोमांचित रहता था और ख्वाब भी देखता था कि वैसा ही कोई पात्र मैं बनाऊँगा। बहुत जल्दी मुझे एक बात समझ आ गई थी मेरे किसी भी सृजन (साहित्य या कार्टूनकला में) में अगर किसी दूसरे सर्जक का असर या छाया दिखाई दे तो वैसे सृजन का कोई अर्थ नहीं है। उस ख्वाब को पालकर मुझे अनेक वर्षों तक राह देखनी पड़ी, धीरज धरनी पड़ी। वर्ष 1997 में नौकरी में मेरा तबादला हुआ और सूरत में निवास करना पड़ा। करीब 13 वर्ष वहाँ गुजारे और वहाँ की सूरती-बोली ने मुझे बहुत आकर्षित किया। वहाँ के लोगों की जीवन शैली भी मेरे दिल पर छा गई थी। अचानक क्या हो आया कि वर्ष 2003 में पात्र 'गनपत सूरती' के सृजन के साथ मैंने एक त्रिअंकी नाटक रचा और उस पुस्तक को वर्ष 2004 का 'गुजरात साहित्य अकादमी' का प्रथम पारितोषिक मिला। तब गुजरात के प्रसिद्ध अखबार 'संदेश' में मेरा व्यंग्य-कॉलम भी चलता था। उसमें और मेरे व्यंग्य उपन्यास (धारावाहिक) 'गनपत के घोटाले' ने समग्र गुजरात पर जादू-सा कर दिया। प्रजा तो ठीक राजनेता भी उसके डायलॉग बोलने लगे। वर्ष 2009 में मेरा नाटक 'गनपत सूरती के घोटाले' मंचित हुआ। 50 से ज्यादा शो के साथ वह भी छा गया! 'संगीत नाटय अकादमी'-गांधीनगर का द्वितीय पारितोषिक उसे प्राप्त हुआ। बाद में और एक नाटक और तीन व्यंग्य उपन्यास (धारावाहिक) के प्रकाशन से 'गनपत सूरती' ने लोकप्रियता में मुझे भी पीछे छोड़ दिया। लेख, नाटक, व्यंग्यकाव्य, व्यंग्य, उपन्यासों में छा चुका 'गनपत सूरती' अभी व्यंग्यचित्रों में आना बाकी था। ओ एन जी सी लिमिटेड की ई-पत्रिका में मेरा इंग्लिश कार्टून कॉलम 'GANPAT SURTI SAYS....' आरंभ हुआ, जिस में खास पेट्रोलियम इन्डस्ट्री के लिए मैंने कार्टून्स बनाए। वर्ष 2016 में 'लिम्का बुक ऑफ रिकार्डस' उसे 'भारत का प्रथम' घोषित कर दिया और राष्ट्रीय कीर्तिमान बन पड़ा! हिन्दी में मेरा व्यंग्य नाटक 'गनपत सूरती क्या करे?' भी (वर्ष-2016 में) प्रकाशित हो चुका और अब व्यंग्य-नाटक 'गनपत सूरती का मनी प्लान' अन्यया प्रकाशन से 2018 में प्रकाशित हो चुका है!

• **आपके ग्यारह राष्ट्रीय रिकार्ड बन चुके हैं, आपको राष्ट्रपति सम्मान भी प्राप्त हुआ है। क्या आप स्वयं अपने कार्य से संतुष्ट है अथवा अब आप और क्या-क्या प्राप्त करना चाहते हैं?**

– 'सृजन' से जो आनंद और रोमांच निष्पन्न होते हैं, वो मुझे चाहिए। कोई छोटा या बड़ा सम्मान, मिले तो आनंद, किन्तु वह मेरा 'लक्ष्य' नहीं हो सकता। मेरा 'निर्मिश' होना पर्याप्त है!

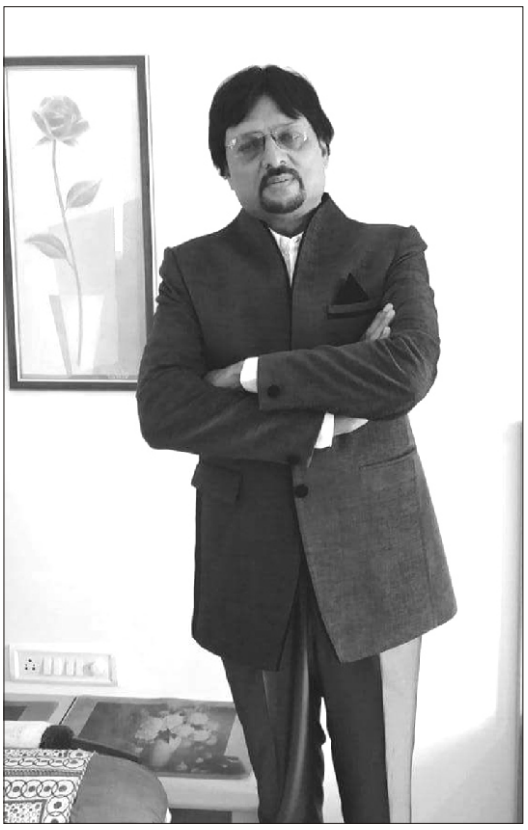

• **आप एक प्रतिष्ठित साहित्यकार भी है। आपने चार पूर्णकालिक नाटक रचे हें। क्या सबका प्रदर्शन देश में हुआ है? एक नाटक जिसका प्रदर्शन 50 से अधिक बार हुआ है, उसके विषय में बतायें...**

– पूर्व प्रश्नों के उत्तरों में यह स्पष्ट कर चुका हूँ।

• **आप एक गायक भी हैं, अपनी गायकी के विषय में कृपया बताइयेगा। कौन से धारावाहिक फिल्म आदि हैं, जिनमें आपने गीत गाये हैं?**

– बचपन से ही मुझे हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में बहुत रस रहा है। अनेक हास्य कवि सम्मेलनों में मैं पैरोडी (अनुकरण काव्य) तरन्नुम में सुनाता आया हूँ। गुजराती कॉमेडी टी वी सीरियल 'गम्मत गुलाल' (दूरदर्शन) 'वाह भाई वाह'(ई-टीवी) में भी मैं अभिनय के साथ गा चुका हूँ। सी टीवी (गुजराती) में भी।

• **आपने 50 से अधिक पुस्तकें लिखीं हैं। उनके क्या विषय है? क्या पुस्तक लेखन आपको कार्टून निर्माण में बाधा नहीं पहुँचाता?**

– मेरा नाता कार्टून्स के अलावा गंभीर और व्यंग्य साहित्य से घनिष्ठ रूप से रहा है। छंदमुक्त, ग़ज़ल, सॉनेट्स, ट्रायोलेट (फ्रैन्च काव्य प्रकार), बाल-कविताएँ, दिग्गज प्रतिभाओं के साक्षात्कार, शास्त्रीय संगीतकारों....आदि विषयों पर मेरी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। हास्य-व्यंग्य साहित्य में व्यंग्यकाव्य, प्रतिकाव्य (अनुकरण काव्य), व्यंग्य तज़मीन (स्व-निर्मित काव्यप्रकार) व्यंग्य-उपन्यास, व्यंग्य-नाटक, व्यंग्य-आलोचना की पुस्तकें भी। व्यंग्यचित्रों की पुस्तकें अलग। सृजन में कोई गणित नहीं, जैसा दिल कर आता है वैसा सृजन करता हूँ....अत: 'बाधा' जैसा कुछ महसूस होता नहीं।

• **एक साहित्यकार के रूप में आप अपने को कहाँ पाते हैं? ऐसा तो नहीं कि साहित्यकार आपको कार्टूनिस्ट मानें और कार्टूनिस्ट आपको साहित्यकार?**

– आपका शक सही है, किन्तु सद्भाग्य से गुजरात के मेरे लाखों चाहक मुझे साहित्यकार मानते हैं। मेरी पुस्तकों में भी साहित्य ज्यादा और कार्टून्स कम है। मेरे कार्यक्रमों का भी यही हाल है। मेरे पात्र 'गनपत सूरती' की प्रचंड लोकप्रियता भी 'व्यंग्य-साहित्य' में ही है।

• **आप अभिनेता भी हैं, मॉडल भी रहे हैं। आपने एक नाटक में 'निर्मिश ठाकर' का चरित्र अभिनीत किया था। क्या यही भी रिकार्ड तो नहीं?**

– अभी 'गढिया ट्रापैस्स' नामक कंपनी ने मुझे लेकर (मॉडल के रूप में) उनका विज्ञापन तैयार किया है। मैंने पिछले साल(2016) दूरदर्शन का कॉमेडी सीरियल 'हँसे वो हैप्पी!' में खुद का चरित्र अभिनीत किया था और LIMCA BOOK OF

RECORDS में यह कीर्तिमान दर्ज होने की पूरी संभावना बनी हुई है।

• **आपकी बहुमुखी प्रतिभा को सलाम! आप अजराडा घराना से, संगीत की दुनिया से ताल्लुक रखते हैं, एक तबलावादक के रूप में भी आप सम्मानित हैं। सभी प्रतिभाओं के लिए समय कैसे निकालते हैं।**

– मेरा स्वास्थ्य (मानसिक तथा शारीरिक) साथ दे रहा है। शायद ये कुदरत की देन है। हाँ रोज तबलावादन का नियमित रियाज़ करता हूँ।

• **आपके फ्रेंच काव्यसंग्रह 'मैं निर्मिश!' के विषय में बताइयेगा।**

– वह मेरा 'ट्रायोलेट' संग्रह है, जो वर्ष 2010 में प्रकाशित हुआ था। 'ट्रायोलेट' फ्रेंच काव्य प्रकार है जो 13 वीं शताब्दी में अस्तित्व में आया था। उसमें आठ पंक्तियाँ होती हैं, जिसमें प्रथम पंक्ति काव्य में चौथे और सातवें स्थान पर तथा द्वितीय पंक्ति आठवें स्थान पर पुनरावृत्ति होती है। यह चक्राकार काव्यप्रकार में प्राय: रचना 'ABaAaAB' प्रकार की होती है, जो अति आवश्यक है। यह प्रकार ज्यादातर गंभीर और कभी-कभी 'व्यंग्य' में भी हो सकता है। इस प्रकार को हिन्दी तथा गुजराती में सर्वप्रथम ले आने का श्रेय मुझे हासिल है। प्रसिद्ध हिन्दी पत्रिका 'व्यंग्ययात्रा' (सं.-श्री प्रेम जनमेजय) में जो प्रकाशित हुआ था, वह ट्रायोलेट यहाँ उदाहरण के तौर पर....

कविवर का सम्मान (व्यंग्य-ट्रायोलेट)

शाल ओढा ही दो कविवर को/ माईक से जो करीब लगते हैं/ खूब तडपे हैं हिज्र में बरसों/ शाल ओढा ही दो कविवर को/ दिल से कब थे करीब, रहने दो!/ शब्द बेचा किये थे सस्ते में/ शाल ओढा ही दो कविवर को/ माईक से जो करीब लगते हैं।

• **आपका प्रिय सिने अभिनेता, अभिनेत्री, खलनायक, खलनायिका और चरित्र कलाकार कौन है?**

– हर एक प्रकार में एक नाम देना मुश्किल है और लिस्ट बहुत लम्बी है!

• **आपके प्रिय साहित्यकार कौन-कौन है जिनके कॅरिकैचर बनाकर आपको बहुत संतुष्टि हुई?**

– एक नाम लेना मुश्किल है, किन्तु जब मैंने दिग्गज उपन्यासकार खुशवन्त सिंग जी का बहुत बोल्ड व्यंग्यचित्र बनाकर उन्हें भेजा तो मैंने कभी सोचा नहीं था कि गंभीर बीमारी के बावजूद वे अति प्रसन्न होकर अपने हस्ताक्षरों में मुझे प्रशंसा-पत्र लिखेंगे!

• **आपकी कार्टून प्रदर्शनी बहुत पसंद की जाती है। उनके विषय में अपने-अपने अनुभव बताइए।**

– एक पुस्तक कम पड़े इतना बड़ा विषय है ये और अति संक्षिप्त में बताना विषय के साथ अन्याय होगा।

• **नवोदित कार्टूनिस्टों को आप क्या संदेश देना चाहेंगे?**

– वर्ष 1997 में मेरी प्रथम प्रदर्शनी उद्घाटित करने पधारे श्री आर के लक्ष्मण को मीडिया ने प्रश्न किया था कि निर्मिश के लिए आप क्या संदेश देना चाहेंगे? (मैं भी तब नवोदित था!) उनका ज़वाब था : ''कोई संदेश नहीं! मुझे भी मेरे सीनियर्स ने कभी कोई संदेश नहीं दिया था। जो बिना कोई मार्ग-दर्शन अपना मार्ग खुद ढूँढ लेते हैं, वही श्रेष्ठ होते हैं!'' अब मेरा भी यही उत्तर है!

• **और कोई प्रश्न जिसका उत्तर आप देना चाहेंगे?**

– जी, ऐसा कोई प्रश्न पूछें जिसके उत्तर में मैं कह सकूँ कि मैं आपका हृदयपूर्वक आभारी हूँ!

■

कहानी

क्षरण

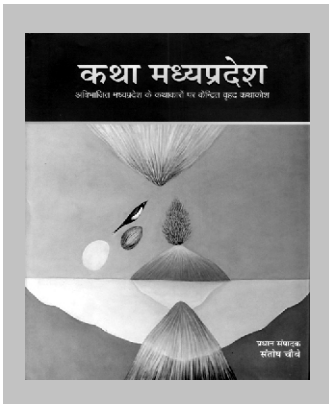

नारी की, परिवार की बनावट में जगह तथा बुनावट में सक्रियता की अभिव्यक्ति की लेखिका मालती जोशी को 'पद्मश्री 2018' सम्मान लेखक बिरादरी का गौरव है। - कला समय

पद्मश्री मालती जोशी

जन्म : 4 जून, 1934 ई. औरंगाबाद (पूर्व हैदराबाद राज्य)
शिक्षा : एम.ए. हिन्दी
लेखन : विद्यार्थी जीवन से काव्य लेखन
प्रकाशित पुस्तकें : कुल 32 (दो उपन्यास, पांच बाल कथायें, एक गीत संग्रह, दो मराठी कथा संग्रह, बाईस हिन्दी कहानी संग्रह प्रकाशित)
विशेष : हिन्दी की प्राय: समस्त पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ, लघु उपन्यास आदि प्रकाशित। दूरदर्शन व रेडियो से कहानियों के नाट्य रूपान्तर प्रसारित। जया बच्चन ने सात कहानियों पर 'सात फेरे' सीरियल बनाकर प्रस्तुत किया। गुलजार द्वारा निर्देशित 'किरदार' सीरियल में दो कहानियाँ समाविष्ट।
सम्मान/पुरस्कार : 1983 में शिवसेवक तिवारी पदक, 1984 मराठी कथा संग्रह 'पाषाण' को महाराष्ट्र सरकार का पुरस्कार। म.प्र. लेखक संघ का अक्षर आदित्य सम्मान, कला मंदिर, मधुबन गुरुवंदना सम्मान, 1985 का अहिन्दी भाषी हिन्दी सेवी सम्मान। साहित्य सम्मेलन का भवभूति अलंकरण। अनेक विश्वविद्यालयों में एम.फिल और पीएच-डी. हेतु शोध। अनेक देशी-विदेशी भाषाओं में रचनाओं का अनुवाद प्रकाशित।
संपर्क - 'स्नेह बंध' 50 दीपक सोसायटी, चूना भट्टी, कोलार रोड, भोपाल- 462016 दूरभाष-0755 2461630

रोते-रोते शर्माइन की हिचकी बँध गई थी। उनके दुख से एकबारगी विमलाजी का मन भी भीग उठा। हालाँकि वह जानती थीं कि रोने का कारण एकदम बचकाना था। आज फिर गोविंदजी के भोग से पहले लोगों ने खाना जुठार दिया था। कुछ कहने जाओ तो बहू चढ़ बैठती है, ''अब बारह बजे तक ठाकुरजी का भोग न लगे तो क्या आपके बेटे को भूखा ही दफ्तर भेज दूँ! बच्चे क्या रोज डबलरोटी खाकर जाएँगे।''

''बहनजी'', विमलाजी ने सांत्वना के स्वर में कहा, ''मैंने कितनी बार कहा है कि अपना पूजा-पाठ अब अपने तक ही रखिए। आजकल न तो किसी को इन चीजों में श्रद्धा रही है न किसी के पास इतनी फुरसत है। आप देखती तो हैं सुबह से कैसी भागमभाग मची रहती है। शहर में तो सारे कायदे ही उलट-पुलट हो जाते हैं। हड़बड़ी में किसी को नहाने का भी होश नहीं रहता- ऐसे ही रसोई में घुस जाती हैं। अब ऐसे खाने का आप क्या भोग लगाएँगी?''

''तुम ठीक कहती हो बहना। जब से तुमने समझाया है, हम भी अब घर में टंटा-बखेड़ा नहीं करतीं। बस, अपनी परसी थाली का भोग लगा कर हाथ जोड़ लेती हैं कि लो जैसा तुम खवा रहे हो, हम खा रही हैं। हमारे संग तुम भी खाओ...पर बहन आज तो शरद पूनो थी,'' उनका स्वर फिर रूँआसा हो गया, ''आज हम खुद रसोई में घुसी थीं। अपने कन्हैया के लाने हमने खीर बनाई थी। हमें कौन पता था कि मरा दफ्तर आज भी लगेगा। इस्कूल की छुट्टी नहीं होगी। नहीं तो हम तड़के ही उठ कर बना देती।'' कहते-कहते फिर वे सिसक पड़ीं। विमलाजी ने उन्हें चुप कराने का प्रयास नहीं किया। शांत भाव से उन्हें देखती रहीं। सोचा, जी भरकर रो लेंगी तो मन थोड़ा हल्का हो जाएगा। घर पर तो

शायद खुलकर रोना भी मुहाल होगा।

जब उनकी रुलाई का आवेग कुछ कम हुआ तो विमलाजी ने सांत्वना के स्वर में कहा, ''बहनजी, अब सब्र कीजिए। बस यही समझ लीजिए कि चलते-फिरते बाल गोपालों ने आपकी खीर का भोग लगाया है। सच कहूँ बहन, यह सारा फैलाव तो हम अपनी तृप्ति के लिए करते हैं, नहीं तो भगवान क्या हमारी कटोरी भर खीर के भूखे हैं! अरे वे तो भाव के भूखे हैं। अंतर्यामी हैं वे, आपकी पीड़ा को समझते हैं। इसलिए अब आप यह सोच अपने मन से बिल्कुल निकाल दीजिए। तभी संतोष मिलेगा।''

''वाह बहन, धन्न हो। इसीलिए तो हम भागी-भागी यहाँ आती हैं। घड़ी खांड तुम्हारे पास बैठ लेती हैं, ग्यान-ध्यान की बातें सुन लेती हैं तो बड़ी शांति मिलती है। सारा दुख बिसर जाता है।''

अपनी प्रशंसा से पुलकित तो हुई, विमलाजी, पर उन्होंने अपनी गंभीरता बनाए रखी। बोलीं, अच्छा यह बताइये, आपने सुबह से कुछ खाया भी है या नहीं। देखिए, आप अगर भूख-हड़ताल करेंगी तो आपके घर भीतर बैठे भगवान भी भूखे रह जाएँगे। वह क्या आपको अच्छा लगेगा?''

''न बहन, अब हम वैसा गुस्सा नहीं करतीं, न भूखी रहती हैं न खटपाटी लेकर पड़ती हैं। क्या फायदा! न किसी को हमारे रूठने की परवाह है न मनाने की फुरसत है। अपना खून और जलता है।''

''यह हुई न समझदारी की बात,'' विमलाजी ने उन्हें शाबाशी देते हुए कहा, ''चलिए अब घर चलते हैं।''

उनका बहुत मन था कि शर्माइन को थोड़ी देर के लिए अपने घर ले चलें थोड़ा प्रकृतिस्थ हो लेगी। पर साहस नहीं हुआ। पता नहीं बहू को अच्छा लगे, न लगे। बेटे के विचार तो उस दिन जान चुकी हैं।

उस दिन वे लोग इसी तरह मंदिर से लौट रही थीं। रास्ते में समीर मिल गया, दफ्तर से लौट रहा था। माँ को देखते ही उसने गाड़ी रुकवाई, आदर सहित दोनों महिलाओं को जीप में बिठाया। शर्माइन का घर आते ही उसने खुद उतरकर उनके पीछे का दरवाजा खोला, गेट तक उन्हें छोड़ने गया, सिर झुकाकर उन्हें प्रणाम भी किया। विमलाजी तो गद्‌गद हो गईं। सुशील और विनम्र बेटा तो हर माँ के अभिमान का बिन्दु होता है।

पर उनका यह सारा अभिमान घर में पाँव रखते ही चूर-चूर हो गया। सोफे पर बैठकर जूते खोलते हुए समीर ने कहा था, ''मम्मी! इस बुढ़िया को ज्यादा मुँह न लगाया करो। बड़ी चेंटू है।''

वे सन्न रह गईं। समीर ऐसी भाषा बोल सकता है, उन्हें तो विश्वास ही नहीं हुआ। लगा कि उनके संस्कारों में जरूर कहीं खोट रह गयी है, लगा जैसे उनकी सारी साधना विफल हो गई है। कसैले स्वर में बोलीं, ''बूढ़ी तो बेटा मैं भी हूँ। कल को मेरे लिए कोई ऐसी बात कहे तो तुम्हें कैसा लगेगा!''

कट कर रह गया समीर। फिर अपनी सफाई-सी देता हुआ बोला, ''मैं तो यह कह रहा था मम्मी कि आपका उनका कोई मुकाबला नहीं है। बेकार में बोर होंगी।''

''ऐसा है बेटा, आदमी को हर हाल में एक हमउम्र साथी की तलाश होती है। बुढ़ापे में तो ये जरूरत और भी बढ़ जाती है। और मुझे क्या, दो घड़ी बातें ही तो करनी हैं। कोई डिग्रियों की नुमाइश थोड़े ही लगानी है।''

समीर ने फिर कोई प्रतिवाद नहीं किया। उन्होंने भी निश्चय कर लिया कि अब से वे समीर से रास्ते में नहीं टकराएँगी। जिंदगी भर घड़ी बाँधती रही हैं। समय का इतना ध्यान तो वह रख ही सकती हैं।

वैसे समीर ने ठीक ही कहा था। उनका और शर्माइन का कहीं कोई मुकाबला नहीं था। कोई साम्य नहीं था दोनों में। शर्माइन बेचारी सीधी-सादी मिडिल फेल घरेलू महिला थीं जो जबरन वानप्रस्थ में ठेल दी गई थीं। उनके मन-प्राण अब भी घर-गृहस्थी में ही बसते थे। और विमलाजी की उम्र का एक लंबा दौर प्रधानाचार्या की कुरसी पर बीता था। सेवानिवृत्ति के बाद वे मजबूरन बेटे की गृहस्थी में आ गई हैं, पर न उनका घर में मन रमता है, न बाहर जाने की इच्छा होती है।

हमेशा से वे ऐसी नहीं थीं। एक समय था जब उन्हें भी घर-गृहस्थी का शौक था। वे भी पति और बच्चों के लिए नाश्ता बनाती थीं, स्वेटर बुनती थीं। उन्हें भी बड़ियाँ तोड़ना, अचार बनाना और पड़ोसन से गप्पें लड़ाना आता था। मेहँदी-महावर लगाकर बुलौवों में जाना, बन्ने और सोहर गाना उन्हें अच्छा लगता था।

पर विधाता को ही यह मंजूर नहीं था। एक पल में उनका यह सुख छिन गया और दोनों बच्चों के साथ उन्हें भाई की गृहस्थी में आश्रय खोजना पड़ा। अपनी गृहस्थी के खट्टे-

मीठे अनुभवों का स्वाद वे भूल गईं। भाभी के कड़वे बोल ही याद रह गए। अपमान सहना उनकी फितरत में नहीं था। सोच लिया कि जब तक बच्चों को अपनी छत नहीं दे देंगी, साँस नहीं लेंगी। और सचमुच वे एक पल भी चैन से नहीं बैठीं। सुबह-शाम किताबों से जूझतीं, दोपहर में एक फटीचर स्कूल में पढ़ातीं। इसी हाल में उन्होंने बी.ए. किया, बी.एड. किया, एम.ए. की डिगरी ली। फिर कस्बे की ही सही, पर अच्छी-सी नौकरी पाने के बाद ही उन्होंने दम लिया।

इस आपाधापी में पूजापाठ का कभी समय ही नहीं मिला। संकट की उन घड़ियों में तो ईश्वर से आस्था ही उठ गई थी। हाँ, क्वार्टर मिलने के बाद उन्होंने घर में दो फोटो लगा लिए थे। एक राम पंचायतन और एक बच्चों के पिता का। खुद तो शायद ही कभी हाथ जोड़ती हों पर सुबह-शाम अगरबत्ती जरूर जला देती थीं ताकि घर में एक सात्विक वातावरण बना रहे। बच्चों के मन में भगवान का डर और पिता की याद बनी रहे। समीर की शादी के बाद वे दोनों तस्वीरें उन्होंने समीर को दे दी थीं- फिर वे उस ओढ़ी हुई औपचारिकता से भी मुक्त हो गई थीं।

इसीलिए जब यहाँ आकर उन्होंने नियम से मंदिर जाना शुरू किया तो समीर को बहुत आश्चर्य हुआ। नेहा ने लेकिन इसे बड़े सामान्य ढंग से लिया। बोली, ''अरे इस उम्र में सभी को भगवान याद आते हैं। आपकी मम्मी कोई दुनिया से अलग है?'' पर समीर जानता है कि मम्मी किस मिट्टी की बनी हुई हैं। वह सचमुच दुनिया से अलग हैं। वह पत्नी की बात पर विश्वास नहीं करता, पर बहस भी नहीं करता।

अच्छा ही है जो समीर बहस नहीं करता। नहीं तो किसी दिन कारण तक पहुँच ही जाएगा। और कारण ऐसा है कि विमलाजी को सोचते भी शर्म आती है।

तीन बजते हैं और उनके पेट में मरोड़-सी उठने लगती है। मन चाय के लिए व्याकुल हो उठता है। कौन विश्वास करेगा कि अपनी तलब को भुलाने के लिए ही वे मंदिर की ओर भागती हैं। उन्हें अपना वह छोटा-सा पर सुसज्जित ऑफिस याद आता है। घड़ी की सुई तीन पर होती और जमना मेज पर चाय रख जाती। कभी उसे आवाज देकर याद दिलाने की जरूरत नहीं पड़ी। उस समय अगर कोई बाहर वाला बैठा होता तो उसके लिए भी बिना कहे चाय आ जाती। लेकिन स्टाफ के लोग उस समय वहाँ झाँकते भी नहीं थे। सब जानते थे कि ये मैडम का 'टी-टाइम' है। इसमें कभी व्यतिक्रम नहीं हुआ। सुषमा जब तक थी, बना कर देती थी। उसकी शादी के बाद कालीचरण ने यह काम संभाल लिया। कालीचरण उनके घर का पीर, बवर्ची, भिश्ती, खर-सब कुछ था।

रिटायरमेंट के बाद वे जब राजपुर से चलने लगी थीं तो जमना और कालीचरण कितना रोए थे। यों तो सारा स्टाफ, सभी छात्राएँ रोई थीं, पर ये दोनों तो किसी से सँभल ही नहीं रहे थे। बिलख-बिलखकर कह रहे थे, ''अरे हमारी तो माँ जा रही हैं। हमें रोने भी न दोगे क्या!''

अब यहाँ आकर सब सपना-सा लगता है। माँ के बिछुड़ने पर कौन इतना रोता है आजकल! वह तो कोई और ही रिश्ता था।

दुख तो उन्हें भी हुआ था। अपनी बसाई हुई दुनिया छोड़ते किसे दुख नहीं होता। खुशी की बात यही थी कि समीर और नेहा स्वयं उन्हें लिवाने पहुँच गए थे। यहाँ पहुँचने के बाद भी बहू तीन-चार दिन तक काम पर नहीं गई। उसे मालूम था कि इतने व्यस्त जीवन के बाद यह अकेला घर मम्मीजी पर भारी पड़ेगा।

मानसिक रूप से सेटल होने में तो उन्हें शायद सालभर लग जाएगा। तब उन्होंने ही नेहा से कहा था-''तुम अपनी छुट्टियाँ क्यों जाया करती हो, मैं एडजस्ट कर लूँगी।''

नेहा शायद उनकी अनुज्ञा की बाट ही जोह रही थी। दूसरे ही दिन वह पति के साथ चल पड़ी। घर में रह गई विमला जी, दो साल का उदित और उसकी आया रामबाई। उनसे तो अकेले खाना भी न खाया गया। एक बजे प्राची स्कूल से लौटी तब जाकर घर में जरा रौनक हुई।

तीन बजे चाय की तलब हुई। रामबाई को आवाज दी, ''बाई, चाय बना लेती हो?''

''जी! हम तो खाना भी बना लेत हैं''

''तो एक कप बढ़िया सी चाय तो बनाओ। शकर जरा कम।'' रामबाई ने उत्साहित होकर चाय बनाई। बाकायदा ट्रे में रखकर पेश की। जी खुश हो गया। तीन-चार दिन तक यह क्रम चलता रहा। घड़ी का काँटा तीन पर होता और रामबाई चाय हाजिर कर देती। मन प्रसन्न हो जाता। रिटायरमेंट का सारा मलाल धुल जाता।

फिर अचानक एक दिन सुबह चाय पीते हुए नेहा ने पूछ लिया, ''मम्मीजी! आप आया को रोज चाय देती हैं? प्राची

बता रही थी।''

वे तो स्तब्ध रह गईं। यह पाँच साल की छुटकी जासूसी भी करती है! और नेहा उसे डाँटने के बजाय शह दे रही है। उन्होंने बड़ी मुश्किल से अपने को जब्त करते हुए कहा- ''नेहा! चाय मैं उसे नहीं देती बल्कि वह मुझे देती है।''

''हाँ, लेकिन आपके लिए बनाने के बहाने खुद भी पीती है।''

''पीती होगी। ये लोग क्या नाप कर बनाती हैं। थोड़ी बहुत तो बच ही जाती है।''

''नहीं मम्मीजी! वह जानबूझकर ज्यादा बनाती होगी। बहुत चंट है वो। दरअसल मम्मीजी, हम उसे सूखे तीन सौ देते हैं। चाय की बोली नहीं है। एक बार आदत पड़ जाएगी तो....''

''तो क्या?''

''आप नहीं होंगी तब भी वह बना लिया करेगी।''

''मैं नहीं हूँगी मतलब! मुझे कहाँ भेज रही हो नेहा।'' नेहा एकदम सकपका गई। समीर भी उसे आग्नेय नेत्रों से घूरने लगा। उन्होंने जल्दी से उस प्रसंग को समेटते हुए कहा, ''ठीक है, अब से मैं खुद बना लिया करूँगी। अभी ये सामने रक्खी चाय तो खत्म करो।''

●

सुबह उन्होंने प्रसंग तो समाप्त कर दिया, पर समस्या तो वहीं की वहीं रही। तीन बजने को हुए और वह चुपचाप किचन में चली गईं। उन्हें चाय बनाते देख रामबाई तो पानी-पानी हो गई! ''मम्मीजी। हमें आवाज दे लई होती। मुन्ना को सुलाके हम आत ही हते।''

उन्होंने चाय छानी। नाप कर ही बनाई थी। एक कप भी पूरा नहीं भर सका। उन्होंने रामबाई की तरफ देखा। उसकी आँखों में छलकती आशा उन्हें भीतर तक चीर गई। छि:, अपने ही घर में चोरी से छुप-छुपकर पीना उनसे नहीं हो सकेगा! इससे अच्छा तो यही है कि एक कप चाय के लिए वे भी तरसें- उसे भी तरसाएँ।

उस दिन पहली बार उन्हें अपने रिटायरमेंट का झटका महसूस हुआ। दूसरे दिन तीन बजते ही वे बाहर निकल पड़ीं। कॉलोनी के सिर पर मुरली मनोहर का छोटा-सा मंदिर है। निरुद्देश्य घूमते हुए वहीं पहुँच गईं। शर्माइन से पहली मुलाकात उसी दिन हुई थी। पता चला कि वे भी इसी कॉलोनी में रहती हैं। यह भी मालूम हुआ कि वे भी अपने बेटे के पास रहती हैं।

शर्माइन के लिए परिचय का इतना सा सूत्र काफी था। उसे पकड़कर वे जो शुरू हुईं तो बोलती ही चली गईं। बोलते-बोलते कब वे रोने लगीं पता ही नहीं चला। उनके दुखों की बाढ़ में विमलाजी की अपनी पीड़ा मन की तलहटी में चली गई। पहली ही मुलाकात में घर का चिट्ठा खोलने वाली उस स्त्री के प्रति उन्हें वितृष्णा भी हुई, पर सहानुभूति का पलड़ा भारी रहा।

फिर तो यह रोज का क्रम हो गया। अनपढ़ और गँवार होने का एक फायदा है। ऐसे लोगों को दुख छिपाने का नाटक नहीं करना पड़ता। शर्माइन तो अपने साथ आँसुओं का अक्षय कोष लेकर चलती थीं। बच्चों की तरह रोती थीं। फिर विमलाजी उन्हें औपचारिक सांत्वना देती थीं। स्थिति से समझौता करने की सलाह देती थीं। कर्मकांड की व्यर्थता समझाती थीं। भक्ति तत्व के सिद्धांत सुनाती थीं। वे खुद हैरान थीं कि इतना ज्ञानामृत उन्होंने कहाँ से इकट्ठा कर लिया। शायद जीवन का अविरल संघर्ष ही उन्हें दार्शनिक बना गया था। जो भी हो, शर्माइन तो उन्हें गुरु मानकर पूजने लगी थीं।

इस चक्कर में तीन बजे की चाय कब छूट गई, पता ही नहीं चला। एक दिन रविवार की दोपहर को समीर खुद उनके लिए चाय बनाकर लाया तो उन्होंने निग्रहपूर्वक मना कर दिया।

''आपने चाय छोड़ दी। क्या बात करती हैं?''

''कोशिश कर रही हूँ रे। आजकल डॉक्टर लोग कम पीने की सलाह देते हैं न!''

समीर ने फिर जिद नहीं की।

●

नेहा ने एकाएक पैर छुए तो वे चौंक पड़ीं। देखा, नेहा नई नकोर साड़ी पहने है। वही जिस पर कल खड़े-खड़े फॉल लगवा लाई थी।

उसे ढेरों आशीर्वाद देने के बाद उन्होंने पूछा, ''कहीं जाने की तैयारी है?''

''हाँ मम्मीजी! हम लोग कन्सर्ट में जा रहे हैं। आप बच्चों को देख लेंगी न! वैसे आठ बजे तक तो रामबाई रह जाएगी। बस, एकाध घंटे का सवाल रह जाएगा।''

उन्हें उत्तर देने में थोड़ा विलंब लगा। बच्चों को सम्हालने की अभी आदत नहीं पड़ी है, जी घबराता है। उनकी चुप्पी का समीर ने पता नहीं क्या मतलब लगाया। बोला,

''मम्मी आप चलेंगी? शिवकुमार शर्मा का संतूर वादन है। आप तो उनकी फैन हैं न।''

एक क्षण को उनका भी मन ललचा गया। रेडियो पर, रेकॉर्ड प्लेयर पर तो कई बार सुना है, पर सामने बैठकर सुनने का आनंद ही कुछ और है। पर उन्होंने देखा, नेहा के चेहरे की रेखाएँ खिंचने लगी थीं, इसीलिए अपने को जब्त करके बोलीं, ''नहीं रे! अब दो-तीन घंटे एक जगह बैठने की ताकत नहीं रही। वैसे अब टी.वी. पर सबको देख ही लेती हूँ। उतना साफ तो हॉल में भी क्या दिखेगा।''

उन्होंने स्पष्ट अनुभव किया, पति-पत्नी दोनों ने राहत की साँस ली है। मतलब समीर का अनुरोध भी औपचारिक था। ऐन वक्त पर उमड़ी सदाशयता थी वह। नहीं तो क्या पहले से नहीं कह सकता था।

''मम्मी जी!'' नेहा मिश्रीघुले स्वर में बोली, ''आप खाने के लिए मत रुकिएगा। हमें देर लग जाएगी।''

तभी कपूर लोग आ गए जिनकी प्रतीक्षा हो रही थी। समीर की गाड़ी में ही जा रहे थे सब।

''आपने बच्चों का क्या इंतजाम किया?'' मिसेज कपूर पूछ रही थीं।

''मदर-इन-लॉ हैं न!'' नेहा ने दर्प के साथ उत्तर दिया।

''यू आर लक्की यार। हमारे साथ तो साली बड़ी प्राब्लम है। जानती हैं, मिनी को पड़ोस में छोड़ आए हैं।''

उन्हें झुरझुरी हो आई। लड़कियों का 'यार' कहना उन्हें कभी अच्छा नहीं लगा। 'साला' तो उन्हें समीर के मुँह से भी सुनना गवारा नहीं था। समीर जब होस्टल से पहली बार लौटा था तो इतना भुनभुनाया था बहन के पास, ''ढंग सी चार गालियाँ नहीं आतीं मुझे। सीनियर्स सब 'गर्ली' कहकर चिढ़ाते हैं।''

मतलब पुरुष है तो उसे गालियाँ जरूर आनी चाहिए। लेकिन जब अकेली औरत बच्चों को पालती है तो वह बाकी सब कुछ कर सकती है, बेटे को मर्दाने तेवर नहीं सिखा सकती। अब तो खैर भाषा से स्त्री-पुरुष भेद ही मिट गया है।

''शिवकुमार शर्मा कितना हैंडसम है न।'' नेहा चिहुँक रही थी।

''मैडम, हम उन्हें सुनने जा रहे हैं, देखने नहीं।'' समीर ने टोका तो नेहा मुट्ठी तानकर उसकी ओर लपकी, ''यू! जेलस बूट?'' फिर सास की उपस्थिति का खयाल आते ही सहम कर चुप हो गई।

उन्होंने सारे प्रसंग को अनदेखा, अनसुना करते हुए कहा, ''अब तुम लोग घड़ी की ओर भी तो देखो? पौने सात तो यहीं हो गए हैं।''

वे लोग हड़बड़ा कर उठे। थोड़ी देर में हॉल खाली हो गया। वे कुछ देर तक वहीं बैठी रहीं, शो केस में सजी समीर की पुस्तकें और कैसेट्स देखती रहीं। उन्हें खुशी हुई कि इतनी जानलेवा नौकरी के बावजूद समीर में सांस्कृतिक चेतना कायम है। अच्छे और बुरे की पहचान है उसमें। बच्चों के मानसिक और बौद्धिक विकास के लिए उन्होंने जितना श्रम किया था, समीर ने उसे व्यर्थ नहीं होने दिया था। कस्बे में रहते हुए भी वे हमेशा जागरूक रहीं कि उनके बच्चे देहाती या गँवार न कहलाएँ। पता नहीं कहाँ-कहाँ से किताबें मँगवाती थीं। पति के जमाने का एक रेकार्ड प्लेयर था घर में। उसके लिए अच्छे-अच्छे रेकार्ड्स खरीदती थी। समीर को क्रिकेट की महँगी किट खरीद कर दी थी। सुषमा बैडमिंटन खेलती थी। दोनों बच्चों के लिए इंग्लिश कनवरसेशन की, सितार की, तबले की ट्यूशन लगवा रखी थी।

सुषमा तो अब अपनी गृहस्थी में ऐसी रच-बस गई है कि रोज का अखबार तक पलट कर नहीं देखती। बस दिनभर वीसीआर पर पिक्चरें देखती रहती है। पर समीर अब भी साहित्य से, संगीत से जुड़ा हुआ है। वह नेहा को भी अपने रंग में रँगना चाहता है। नेहा भी प्रेम से उसके साथ हर जगह जाती है पर उसके लिए हर कार्यक्रम का मतलब है, नई साड़ी का उद्घाटन।

रात आठ बजे उदित को सुला कर रामबाई घर चली गई। उसके बाद दादी और पोती खाना खाने बैठी।

''दादी माँ! हमें हलुआ चैये।''

प्राची को सुबह-शाम गाजर का हलुआ चाहिए। उसकी माँ ने इसीलिए ढेर सारा बना रखा है। पर दादी उसे दोपहर को खाने नहीं देतीं। उस समय बाहर बरामदे में रामबाई अपना अल्यूमीनियम का टिफिन खोलकर बैठी होती है। उसके खाने का वे दो-चार बार नजारा कर चुकी हैं, पर अचार की एक फाँक देने का भी उन्हें साहस नहीं होता। बहू ने जता रखा है कि सूखी तनख्वाह की बोली है। खाने का 'ठहराव' नहीं है। आप आदत मत बिगाड़िए। इसीलिए वे दोपहर को प्राची को हलुआ

नहीं देतीं। मन ही नहीं होता।

रात के खाने में लेकिन रोज ही वह 'स्वीट डिश' की तरह सामने आता है। अकसर ही मना कर देती हैं। नेहा बुरा-सा मुँह बना लेती है तो समीर समझाता है, 'दरअसल मम्मी को फ्रिज में रखी चीजें खाने की आदत नहीं है न।' पर असली कारण तो वह भी नहीं जानता। वे शायद उसे बताएँगी भी नहीं, पर खुद उस प्रसंग को भूल नहीं पाती हैं।

अभी पाँच-छह दिन पहले की ही तो बात है। उदित का जन्मदिन था। काफी लोगों का खाना था। उसके लिए मेहनत और तैयारी भी काफी करनी पड़ी थी। रामबाई को भी अपने 'ठहराव' से ज्यादा काम करना पड़ा था। टेंट हाउस से मँगवाए हुए बर्तन धोना, हॉल के जाले साफ करना, फर्नीचर खिसकाना-सबमें उसने हाथ बँटाया था। गाजर तो पूरी पाँच किलो उसी ने कसी थीं।

विमलाजी की इच्छा थी कि कम से कम उदित के जन्मदिन पर उदित की आया अपना टिफिन साथ न लाए, पर उन्होंने बहू के निजाम में दखलंदाजी करना ठीक नहीं समझा। सोच लिया कि रात को मिठाई के साथ अपनी ओर से कुछ इनाम दे देंगी।

रात जब गहराने लगी तो उसने घर जाने की अनुज्ञा माँगी। खाना खाने के बाद मेहमान गपशप में व्यस्त थे इसलिए उसे बिदा करने के लिए वे खुद ही उठीं। पर नेहा भी जैसे जायजा लेने के लिए उनके पीछे रसोई में आ पहुँची। थाली देखकर बोली, ''मम्मीजी, इतना सारा वो खा थोड़े ही पाएगी।''

''वह घर जाएगी! बच्चों को छोड़कर ये सब उसके गले से यहाँ उतरेगा भी।'' उन्होंने कहा। पर जैसे ही वे हाथ धोने के लिए सिंक पर गईं, उन्होंने देखा कि नेहा ने दो रसगुल्ले और दो दहीबड़े उठा लिए हैं। गाजर के हलुए की तो पूरी कटोरी ही उठा ली है। बहुत अपमानित-सा महसूस हुआ उन्हें। मन हुआ कह दें, ''नेहा, कम से कम गाजर के हलुए पर तो उसका हक बनता ही है, चाहो तो मेरे हिस्से का दे दो।''

पर इतनी ओछी बात वो कह नहीं पाईं। लेकिन फाँस-सी गड़ गई मन में। हलुआ देखती हैं तो सारा प्रसंग याद आ जाता है।

●

उस रात नेहा ने उन्हें एक और धक्का दिया था। पार्टी बहुत ही कामयाब रही थी। वे थककर चूर हो गई थीं, पर मन खुशी से उमग रहा था। दिन-भर लग कर उन्होंने जो चीजें बनाई थीं वे सबको बहुत पसंद आई थीं। उनकी मेहनत सफल हो गई थी। नेहा भी गर्व से सबके पास सास का बखान कर रही थी, ''भई अपन ने तो सिर्फ केक बनाई है। बाकी सब कुछ तो मम्मीजी ने बनाया है।''

लोग उन्हें श्रद्धा से, प्रशंसा से देख रहे थे। तारीफों के पुल बाँधते हुए प्रश्नों की झड़ी लगा रहे थे।

''ये गाजर का हलुआ कैसे बनाया जी! अमको सिखाना। साब को बोत अच्छा लगता है।''

''आंटी, आपके दहीबड़े इतने सॉफ्ट कैसे बने हैं। हमारे तो एकदम कड़े हो जाते हैं।''

''आंटी, आप तो हमारी मैडम को रसगुल्लों का ट्रेड सीक्रेट बताइये। ये बनाती हैं तो उन्हें सरौते से काटना पड़ता है।''

''नेहा, मैं तो तुम्हारी अचार वाली बरनी ही उठाकर ले जाऊँगी। तुम माँजी से दुबारा डलवा लेना।''

रात को बिखरा घर समेटते हुए भी वह प्रशंसा-भरे वाक्य याद आ रहे थे। वे खुश थीं कि उनके हाथ का स्वाद अब भी बरकरार है। बच्चे जब से बाहर निकल गए थे, उन्होंने रसोई में जाना ही छोड़ दिया था। कालीचरण जैसी कच्ची-पक्की बनाता, खा लेती थीं। लेकिन जब भी बनाने का मौका आया उनके भीतर जैसे अन्नपूर्णा का संचार हो जाता था। अपनी इस क्षमता का आज फिर उन्हें प्रमाण मिल गया था। डोंगे बार-बार खाली हो रहे थे और वे उत्साह से उन्हें नये सिरे से भर-भर कर ला रही थीं। इस उम्र में भी उनकी चुस्ती और स्फूर्ति देखकर लोग आश्चर्य कर रहे थे।

नेहा उनका हाथ बँटाने आई तो उन्होंने कहा, ''यह तो मैं कर लूँगी। तुम किचन में देख लो। कौन-सा बर्तन किस में खाली करना है, क्या फ्रिज में रखना है, क्या अल्मारी में, यह सब मेरी समझ में नहीं आएगा।''

''रखने को अब बचा ही क्या है। बस, एक हलुआ भर है।''

उनके कान खड़े हो गए। नेहा के स्वर में कहीं आक्षेप की गंध तो नहीं है। क्या उनका मनुहार कर-कर के खिलाना उसे अच्छा नहीं लगा। पर उन्होंने प्रयत्नपूर्वक यह विचार झटक दिया और कहा, ''अगर कुछ बचा नहीं है तो यह तो खुशी की

बात है। मैं तो डर रही थी कि तुम्हारी सहेलियों को पता नहीं पसंद आएगा भी कि नहीं।''

''पसंद क्यों नहीं आएगा। चटोरी हैं सबकी सब। दूसरों के यहाँ तो खूब सूँत के खाएँगी। पर इनके यहाँ जाओ तो बस, चाय और बिस्कुट पकड़ा देती हैं।''

वे तो अवाक् रह गई। घर आए मेहमानों के लिए कोई इस तरह कहता है! सुषमा होती तो वे उसे डपट देतीं। पर अब बहू से क्या कहें, क्या यह लड़की सचमुच नहीं जानती कि दूसरों को खिलाकर कैसी तृप्ति मिलती है। क्या इसे पता नहीं है कि रसोई के खाली बर्तन गृहिणी के मन को खुशी से भर देते हैं? क्या अतिथि सत्कार अब मात्र एक औपचारिकता ही रह गई है। क्या महँगाई सचमुच इतनी बढ़ गई है कि हमारे मन सिकुड़ने लगे हैं?

प्रश्नों की उस भीड़ में एक बात स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आई। उन्हें मानना पड़ा कि बहुएँ अपने साथ केवल दान-दहेज ही नहीं लातीं। अपने संस्कार भी लाती हैं। और वे संस्कार नये घर में भी धीरे-धीरे अपनी जड़ें जमाने लगते हैं।

●

सुषमा ने इस बार भी संतरों की सौगात भेजी है। उसके यहाँ बड़े-बड़े बागीचे हैं। आम, अमरूद और संतरे-अपने-अपने मौसम में खूब फलते हैं। संतरा तो साल में दो बार आता है। सुषमा भी माँ के पास, भाई के पास हर मौसम के फल भेजती है।

जब राजपुर में थीं तो वे सारे मोहल्ले में सुषमा के बगीचे का मेवा बाँटती थीं। स्टाफ को भी खिलाती थी। सभी लोग सुषमा को खूब असीसते थे। उनसे भी कहते थे ''बहनजी, बड़ी भागों वाली हो आप। लड़की को बड़ा अच्छा घर-वर मिला है। और जैसा बड़ा घर है वैसा ही बड़ा दिल भी है उसका।'' वे सुनतीं और गर्व से उनकी छाती चौड़ी हो जाती।

इस बार तो उन्हें सुषमा की सौगात से उन्हें कुछ ज्यादा ही खुशी हुई थी। इस घर में आने के बाद से पहली बार लगा कि वे अपनी मर्जी से कुछ कर सकती हैं। उन्हें नेहा का मुँह जोहने की जरूरत नहीं है।

उन्होंने प्लास्टिक की सुन्दर टोकरियों में सजाकर अड़ोस-पड़ोस के घरों में संतरे पहुँचाए। रामबाई के लिए एक पैकेट अलग से रख दिया। समीर के ड्राइवर को भी वे नहीं भूलीं। मंदिर जाते समय एक पैकेट शर्माइन के लिए भी साथ लेती गई। उनसे कहा, ''हमारी बिटिया के बाग के हैं। हमारी ओर से अपने राधागोविंदजी को अर्पण कर दीजिएगा।'' उस सरल वैष्णवी ने वह पैकेट माथे से छुआ कर रख लिया। वे जानती हैं कि अब जब तक भोग नहीं लगा लेंगी, शर्माइन एक फाँक भी मुँह में नहीं देंगी।

रात बिस्तर पर लेटीं तो मन बड़ा प्रसन्न था। बरसों की आदत थी उनकी। हमेशा दोनों हाथों से लुटाती ही रही थीं। अपना ज्ञान, अपना प्यार-कुछ भी तो उन्होंने सेंत कर नहीं रखा। यहाँ आकर सब कुछ थम गया था, बड़ी घुटन-सी होती थी। आज मन जैसे एकदम हल्का हो आया।

''सुनिए! जरा अमरावती का कोड तो बताइये। सुषमा को फोन करना है।''

वे एकदम उठ बैठीं। नेहा सुषमा को फोन लगा रही है। चलो अच्छा है। वे भी दो बातें कर लेंगी। बच्चों के हालचाल पूछ लेंगी। वे चलकर दरवाजे तक गई भी पर वापिस लौट आईं। नेहा क्या सोचेगी कि मम्मी इधर ही कान दिए रहती हैं। समीर तो उन्हें खुद ही आवाज दे लेता है, फिर इतनी बेसब्री क्यों! वे सावधान की मुद्रा में पलंग की पाटी पर ही बैठ गईं। समीर जैसे ही बुलाएगा, वे फट से चल देगी।

उधर फोन पर नेहा शुरू हो गई थी, ''दीदी, मैं नेहा बोल रही हूँ....हाँ, यहाँ सब ठीक हैं, मम्मीजी भी बिल्कुल ठीक हैं, रोज घूमने जाती हैं।....मैंने कहा आपके! धन्यवाद तो दे दूँ....अरे भई आपके संतरों के लिए....आपके बागीचे के हैं न, तो आपकी ही तरह मीठे होंगे....अरे अभी चखे कहाँ हैं! जरा कॉलोनी वालों का राउंड पूरा हो जाए। बच जाएँगे तो हम भी चख लेंगे।''

इससे आगे वे सुन न सकीं। दोनों हाथों में सिर थाम कर बिस्तर में धँस गईं। आँसुओं का एक सैलाब-सा पलकों में उमड़ आया। आस्थाओं के टूटने का दर्द क्या होता है इसे उन्होंने नये सिरे से महसूस किया। सोचा काश! वे भी शर्माइन की तरह अनपढ़ और गँवार होती तो वे भी उनकी तरह हिलग-हिलगकर रो लेती।

पर वे जानती है कि वे रोएँगी नहीं। इस बार भी अपनी पीड़ा का समुद्र चुपचाप पी जाएँगी। अपनी टूटन किसी पर जाहिर नहीं होने देंगी। ये छोटे-छोटे दुख उनके भीतर इसी तरह रिसते रहेंगे। और उनके साथ ही क्षार होती रहेगी उनकी जिजीविषा।

कथा मध्यप्रदेश से (क्रमशः) ■

समीक्षा

युग जीवन की अन्तर्वेदना
सहमा हुआ घर

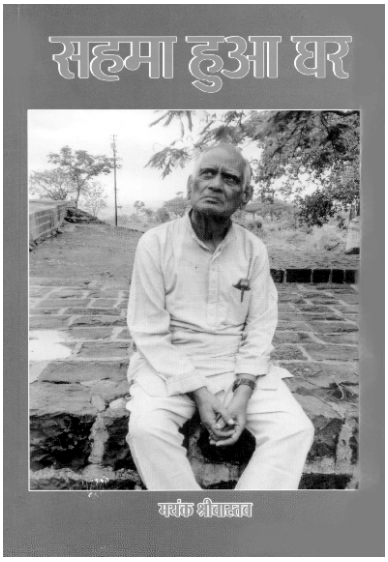

सुकवि गीतकार श्रीमयंक श्रीवास्तव संवेदनशील रचनाकार हैं। उनके गीत समसामयिक सामाजिक जीवन की विसंगतियों और विकृतियों की कुक्षि से जन्म लेकर पीड़ा का हलाहल पान करते हुए पुष्ट होते हैं और सकारात्मक अभिनव सृजन का अमृत-पथ अन्वेषित करते हैं। श्री मयंक श्रीवास्तव की रचना चेतना स्वांतत्र्योत्तर भारत के विकास की साक्षी है। उन्होंने आजादी के साथ विकसित उपलब्धियों और कथित उपलब्धियों के साथ पली-बढ़ी बेइमानियों को निकट से देखा-परखा है। इसलिए उनके गीतों में तथाकथित विकास का छद्म कटु यथार्थ बनकर अनावृत हुआ है। 'सहमा हुआ घर' संग्रह में संकलित गीत इस तथ्य के सबल साक्ष्य हैं।

- डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र

सर्वस्वीकृत तथ्य है कि लोकवेदना की पावन गंगोत्री से गीत की गंगा फूटती है। परायी पीड़ा से मर्माहित होने पर वाल्मीकि का शोक श्लोक बनता है। यही परायी पीर गीतकार मयंक जी की गीत रचनाओं का स्रोत भी है। व्यक्तिगत रूप से मयंक सहज संतोषी, स्वसुख निरभिलाषी प्रतिष्ठित सामाजिक हैं। उन्हें जीवन और जगत से कोई शिकवा नहीं है। किन्तु जब वे समकालीन व्यवस्था में व्याप्त विकृतियों से व्यथित जनसामान्य की बढ़ती विपदाओं को देखते हैं। तब उनका भावुक कवि हृदय उद्वेलित होता है; आक्रोश उमड़ता है और गीत बनकर स्वत: प्रकट होने लगता है इसीलिए उनके गीत जीवन्त और मर्मस्पर्शी हैं। 'सहमा हुआ घर' के गीतों में इस तथ्य की पुष्टि होती है।

'गाँव' मयंक जी के गीतों का प्रियतर विषय है। गाँवों की परिवर्तित हीन दशा पर उनके अन्तर्मन में भीषण हाहाकार है। गाँवों के शोषण से पोषण पाते महानगरों को देखकर उनका कवि मानस गाँव के पक्ष में इस प्रकार स्वर मुखर करता है-''**कच्ची माटी के फूटे घर/ देते रोज बयान/ पढ़े लिखे लोगों ने मिलकर/ लूट लिया खलिहान/ सिसक सिसक कर मन ही मन/ रोया करता है गाँव/ महानगर का बोझ सदा/ ढोया करता है गाँव।।**''(पृष्ठ 19-20)

हमारी राजनीतिक-सामाजिक व्यवस्था महानगरों में बड़े-बड़े फ्लाई ओवर बनाने में, चौड़ी सड़कों को और चौड़ा करने; चौराहों पर बुत लगाने एवं स्मार्ट सिटी बसाने में व्यस्त है जबकि गाँव आज भी पीने के पानी के लिए प्रतीक्षारत हैं। ऐसी विसंगतियों में मयंक जी के गीत स्वर की विश्वसनीयता और भी बढ़ जाती है।

ग्राम जीवन की स्वायत्तशासी व्यवस्था को छिन्न-भिन्न करके और उसकी सहज संतोषी प्रकृति से उसे विमुख करके व्यवस्थापकों ने ग्रामीणों को ऋण योजनाओं और नौकरियों के ऐसे प्रलोभनों में उलझाया है कि गाँव उजड़ रहे हैं; कृषक महानगरों-नगरों में श्रमिक बनने को विवश हो रहे है; कहीं बेरोजगारी के कारण तो कहीं नगरीय जीवन की मृगमरीचिकाओं से आकृष्ट होकर गाँव का युवा पलायन कर रहा है। 'अब खिली सरसों' में इस विकट त्रासदी को कवि मयंक इस प्रकार रेखाकित करते हैं-''**गाँव-नंगा कर दिया है/**

कारखानों ने / और खुशियों छीनकर/ रख ली सयानों ने/ अब खिली सरसों/ नहीं मन बाँध पाती है/ भूख चिमनी के धुएँ को/ सर झुकाती है। झोपड़ों को खा लिया/ पक्के मकानों ने।'' (पृष्ठ - 23)

गाँवों से पलायन और ग्राम जीवन के निरन्तर नीरस होने पर समाज का तथाकथित बुद्धिजीवी वर्ग मौन है। कवि मयंक इस मौन पर मार्मिक व्यंग्य करते हैं-''**अखबारों में नहीं छपी है/ ऐसी कभी खबर/ हवा बैठना नहीं चाहती/ बूढ़े बरगद पर ।/ पीपल खड़ा उदास/ बसेरा छोड़ गई चिड़िया/ गीत आम पर नहीं बैठकर/ गाती कोयलिया/ पगडंडी हो गई अचेतन/ हँसती नहीं डगर।**'' (पृष्ठ 43)

मयंक जी का कवि हृदय ग्राम-जीवन की सहज-स्वाभाविक शैली में जीने को लालायित है। 'चौपाल वाले दिन' गीत में उनकी यह लालसा इस प्रकार व्यक्त हुई है-'**क्या पता है/ कब मिलेंगे/ गाँव की चौपाल वाले दिन/ नीम पीपल/ नहर पनघट/ झील पोखर ताल वाले दिन।/ ढूँढ़ता हूँ रोज होली/ और कजली गायकों के स्वर,/ साफ माटी के बने घर/ घास लकड़ी फूँस के छप्पर/ एक रोटी/ चैन वाली/ और रूखी दाल वाले दिन।**' (पृष्ठ 33)

व्यवस्थागत विसंगतियों ने केवल ग्राम जीवन को ही नहीं वरन नगरीय-महानगरीय जीवन को भी संत्रास से भर दिया है। सर्वत्र चिन्ता, आकुलता, भय आदि नकारात्मक स्थितियाँ जीवन का चैन चुरा रही हैं- ''**दहशतें दहलीज में/ आसन लगाए हैं/ उलझनें अधिकार/ चूल्हे पर जमाए हैं/ लड़खड़ाता आदमी का/ आज है, कल है।**''(पृष्ठ - 52)

कवि मयंक की प्रश्नाकुल रचना चेतना जन साधारण के इस लड़खड़ाते आज-कल को रेखांकित करने मात्र तक सीमित नहीं रहती; वह एक पग अग्रसर होकर पुन: प्रश्न करती है ''**और/ कितनी देर है/ जाने सबेरे में/ एक अरसा हो गया/ चलते/ अँधेरे में / देश में सोया हुआ है/ एक सन्नाटा।/ भीड़/ अंधी कोठरी में / छटपटाती है/ रोशनी/ दो चार घर में / मुस्कराती है/ जिन्दगी आखिर सहेगी/ कब तलक घाटा।**''(59-60)

आज समाज में मनुष्यता दुर्लभ हो रही है। आदमी का आदमी पर से विश्वास उठता जा रहा है। 'गाँव में थाना' गीत में कवि ने यह निर्मम यथार्थ अंकित किया है। ''**आँकड़ा आतंक का/ बढ़ता चला जाता/ आदमी को आदमी/ ठगता चला जाता/ है कठिन इंसान को/ इंसान में पाना।**''(पृष्ठ 28)

सार्वजनिक जीवन में नैतिक मूल्यों के पतन के लिए हमारा स्वातंत्र्योत्तर नेतृत्व दूर तक उत्तरदायी है; परिणामत: 'रहबर' ही 'रहजन' बन गए। कवि मयंक ने यह निर्मम यथार्थ इस प्रकार अंकित किया है-''**लेकर चले विजय की आशा/ लेकिन हार गए/ जिनको अपनी डोर थमा दी/ वे ही मार गए।....आदमखोर मसीहा बनकर/ पुजते जाते हैं/ अपने आप मील के पत्थर/ बनते जाते हैं/ युग के ठेकेदार समूचा ....।**''(पृष्ठ 26)

नेतृत्व की उत्सव प्रियता को भी मयंकजी ने रेखांकित किया है- ''**आग लगती जा रही है/ अन्न-पानी में/ और जलसे हो रहे हैं/ राजधानी में।**''(पृष्ठ 26)

नेतृत्व की उत्सव प्रियता को भी मयंकजी के रेखांकित कर देने मात्र से साहित्यकार के दायित्व की पूर्ति नहीं होती। प्रस्तुत समस्याओं के समुचित समाधान सुझाना भी उसका दायित्व है। कवि मयंक इस तथ्य को समझते हैं और इसीलिए भ्रष्ट व्यवस्था के विरुद्ध सक्रिय होने का संदेश देते हैं- ''...../ कपटी मल्लाहों ने/ कहाँ-कहाँ पर तोड़ दिए/ तटबंधों को ढूँढो।/ द्रव्य कोष के स्रोत अनैतिक/ कहाँ-कहाँ पर हैं/ सभ्य लुटेरों के 'लॉकर' में/ कितने जेवर हैं/ तस्कर, बिल्डर, अफसर, लीडर/ के गठबन्धन से/ पर्दे के पीछे के काले/ धँधों को ढूँढ़ो।''

सुकवि मयंक जी के इस गीत संग्रह की भाषा प्राय: व्यंजना प्रधान है। निम्नलिखित उद्धरणों में व्यंजना का सौन्दर्य इस प्रकार दृष्टव्य है-''**गंध खो गई गुलदस्तों में / मेजों में खोई पहचान/ लहरों में खो गए किनारे/ धरती को पी गई उड़ान/ शब्द खो गए सन्नाटे में/ सूरज फिरे संजोए दाँव।**''(पृष्ठ 31)

(2) ''**एक समझ पीढ़ी ने खो दी**
धूप हँसे औ' रोए छाँव।''(पृष्ठ 31)

(3) ''**दर्द की पगडंडियों से**
खेत घायल है।''(पृष्ठ 52)

व्यंजना के साथ ही लक्षणा का प्रयोग करने में भी मयंक जी को विशेष सफलता मिली है -

(1) ''**गाँव में जंगल मनाता**
रोज मंगल है।'' (पृष्ठ 52)

(2) ''**आँख में पानी लिए**
खलिहान रोता है।''(पृष्ठ 53)

(3) ''**वह मौसम ही जमा हुआ**

जो पानीदार नहीं।''(पृष्ठ 61)

इस संग्रह के गीतों में भाषा तत्सम शब्द प्रधान है। 'पिंजरा', 'पाँव', हाथ आदि तद्भव और 'सुआ', 'तलक' 'पतीली' जैसे देशज शब्दों का भी स्वाभाविक प्रयोग हुआ है। आम बोलचाल की भाषा में रचे बसे विदेशी शब्द भी इस संग्रह के गीतों में सहज सुलभ है। 'कतार', 'हक', 'मुश्किल', 'इज्जत', 'जाहिल', 'काबिल', 'सितम', 'दस्तखत', 'यूरेनियम', 'शोरूम'; आदि शब्दों के सहज प्रयोग से काव्यभाषा सुबोध बनी है। समग्रत: काव्यभाषा भावानुरूप है।

प्रतीकात्मकता और अलंकारिकता इस संग्रह की काव्यभाषा में सहज सुलभ हैं। मयंक जी ने प्रतीकों का चयन प्रकृति से अधिक किया है। 'चिड़िया'; 'सूरज', 'नदी', 'समंदर', 'घाटी', 'जंगल' आदि मयंक जी के प्रिय प्रतीक हैं। घरेलू सामानों में 'चटाई', 'मचान', 'मकान', 'मंच', 'मोहरे' आदि प्रतीक रूप में ग्रहण किए गए हैं। निम्नांकित उद्धरणों में प्रतीकात्मकता रेखांकनीय है-(1) ''**चिड़िया बता रही है अपना/ दुख रोते-रोते।/ करते हैं उत्पात शहर के/ पढ़े हुए तोते।**''(पृष्ठ 15)

(2) ''**मानना होगा हमें/ सूरज अंधेरों को।**''

(3) ''**झोपड़ों को खा लिया/ पक्के मकानों ने।**''-(पृष्ठ 23)

(4) ''**रौंद डाला है/ चटाई को मचानों ने।**'' (पृष्ठ 24)

(5) ''**मिट्टी से दुश्मनी हो गई/ है बालू से यारी/ बाहुबली सीमेंट पड़ रहा/ है रजकण पर भारी।**''(पृष्ठ 95)

इस संग्रह की काव्यभाषा अनेक स्थलों पर लाक्षणिकता, प्रतीकात्मकता,अलंकारिकता आदि सौंन्दर्य प्रतिमानों की संयुक्त प्रस्तुति करती है। निम्नांकित पंक्तियाँ इस संदर्भ में दृष्टव्य हैं-(1) ''**भाव महंगे हो गए हैं चाँदनी के/ धूप दीपक से उजाला माँगती है।**''(पृष्ठ 38)/ (2) ''**खड़े है पेड़ सब गुमसुम/ डगर की आँख गीली है/ तनावों से लदी/ अमराइयों की देह पीली है।**''(पृष्ठ 80)

इस प्रकार श्री मयंक श्रीवास्तव की यह गीत संग्रह 'सहमा हुआ घर' युग जीवन की अन्तर्वेदना को यथार्थ के धरातल पर पूरी ईमानदारी से अंकित करता है। यह रचना कथ्य के धरातल पर जितनी सशक्त है। शिल्प की दृष्टि से भी उतनी ही प्रभाव सम्पन्न है। अत: यह गीत संग्रह स्वागत के योग्य है, पठनीय है और संग्रहणीय भी है।

कृति - सहमा हुआ घर, रचनाकार-मयंक श्रीवास्तव
प्रकाशक - पहले पहल प्रकाशन, एम.पी. नगर जोन-2, भोपाल-462016
मूल्य - 250/- मो. 099771 21221
- डॉ. कृष्णगोपाल मिश्र, ए/ 20 बी कुन्दन नगर, अवधपुरी, भोपाल, मो. 98931 89646 ■

पत्रिका ही नहीं, एक रचनात्मक अनुष्ठान

'कला समय' के सदस्य बनें- ❍ पत्रिका की वार्षिक/ द्वैवार्षिक / आजीवन सदस्यता ग्रहण करें। सदस्यता शुल्क मनीआर्डर, ड्राफ्ट, ऑन लाईन अथवा व्यक्तिगत रूप से भुगतान किया जा सकता है।

'कला समय' की एजेंसी के नियम- ❍ आपके गांव, कस्बे, शहर में सांस्कृतिक पत्रिका 'कला समय' की एजेन्सी के लिए सम्पर्क करें। ❍ कम से कम दस प्रतियों से एजेन्सी शुरू की जायेगी। ❍ पत्रिका कुरियर अथवा रजिस्टर्ड बुक पोस्ट से भेजी जायेगी। डाक खर्च एजेन्सी को वहन करना होगा। ❍ कमीशन, प्रतियों की संख्या के आधार पर।

स्थायी तथा सम्पादकीय पता और दूरभाष क्रमांक के साथ सम्पर्क करें- जे-191, मंगल भवन, महावीर नगर, ई-6, अरेरा कॉलोनी, भोपाल- 462016 Email : bhanwarlalshrivas@gmail.com

लेखकों/ कलाकारों से ❍ कला-संस्कृति के अछूते पहलुओं पर सर्जनात्मक और सूचनात्मक आलेख, टिप्पणियां, रिपोर्ताज, साक्षात्कार, ललित निबन्ध, कविताएँ, छायाचित्र, रेखांकन तथा शोध आमंत्रित हैं। ❍ रचनाएँ कागज के एक ओर टाइप की हुई, अथवा सुवाच्य लिपि में अंकित हों। कृपया रचना के साथ पर्याप्त डाक टिकिट लगा लिफाफा भी संलग्न करें। रचनाएँ और चित्र ई-मेल से भी भेज सकते हैं।

अनुरोध : वे सदस्य जिनका वार्षिक/ द्विवार्षिक सदस्यता शुल्क समाप्त हो रहा है, कृपया अपनी सदस्यता का नवीनीकरण करायें।

परकाया प्रवेश

विश्व कविता
शुन्तारो तानिकावा की कविताएँ

शुन्तारो तानिकावा

15 दिसम्बर 1931 को जन्मे जापान के सुविख्यात कवि और अनुवादक शुन्तारो तानिकावा जापान ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में पढ़े जाने वाले कवियों की शानदार परम्परा की अग्रिम पंक्ति के कवि माने जाते हैं। अपने अनुवाद कार्य के अतिरिक्त तानिकावा के हिस्से में 60 से अधिक कविता संकलन हैं । अपनी सृजनधर्मिता के लिए उन्हें अनेक प्रतिष्ठित पुरस्कार और सम्मान मिले हैं । एक कवि के रूप में शुन्तारो के यहां ताज़गी से भरी अद्भुत कविताएँ मिलती हैं। उनकी कविताएं अपने गहन एकांत में अपने पाठक को बुलाती प्रतीत होती हैं । इसी एकांत की खिड़कियों से भीतर झांककर देखो तो जीवन और आत्मा को अनावृत एकाकार रूप में देखा जा सकता है।

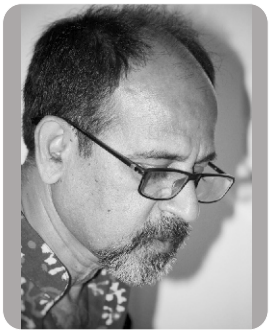

- अनुवाद : मणि मोहन

1. चिथड़े

सुबह होने से पहले
कविता
आयी मेरे पास

लिपटी हुई
चिथड़ों में
शब्दों के

उसे देने के लिए
कुछ भी नहीं है मेरे पास
बस मैंने विनत भाव से
स्वीकार किया उसका उपहार

एक उधड़ी सीवन ने
कुछ पल के लिए
झांकने दिया मुझे
उसके अनावृत आत्म में

एक बार फिर
मैंने रफ़ू किया
उसके चिथड़ों को ।

2. एक बार फिर संगीत

एक दिन कहीं
किसी ने प्यानो बजाया ।
दिक्काल के पार से
इस ध्वनि ने मेरे कानों को चूमा ,
हवा थरथरा रही है अभी भी ।

कहीं दूर से आती एक सरगोशी –
मैं इसे समझा नहीं सकता ।
सिर्फ पा सकता हूँ
जंगल के उन दरख़्तों की तरह
जो हवा के साथ सरसराते हैं ।

पहली ध्वनि का जन्म कब हुआ था ?
इस ब्रह्माण्ड के शून्य के बीच
जैसे कोई संकेत रहस्यमय तरीके से
किसी ने भेजा था .....

किसी भी प्रतिभा ने
संगीत का 'सृजन' नहीं किया
उन्होंने सिर्फ
अर्थ की तरफ अपने कान बन्द किये
और विनत भाव से ख़ामोशी को सुना
जो अनादि काल से अस्तित्व में थी ।

3. 'विदा' एक अल्पकालिक शब्द है

शाम की उजास से विदा लेने के बाद
मैं रात से मिला ।
पर लाल गुस्सैल बादल
कहीं गए नहीं
बस अँधेरे में छिप गए ।

मैं सितारों को शुभरात्रि नहीं कहता
क्योंकि वे हमेशा
दिन की रोशनी में छिप जाते हैं
एक बच्चा जो मैं कभी था
अब भी मेरे उत्स के केंद्र में रहता है ।

मैं सोचता हूँ, कोई भी ,
कहीं गायब नहीं होता
मेरे स्वर्गवासी दादा ऊग रहे हैं
पंख की तरह मेरे कंधों पर ।
वे मुझे समय से बाहर की जगहों पर ले जाते हैं
उन बीजों के साथ
जिन्हें छोड़ा है मृत फूलों ने ।

'बिदा' एक अल्पकालिक शब्द है ।
यहां कुछ चीज़ें हैं
जो हमें बाँधें रखती हैं
एक साथ
याद करने और याद रखने से ज्यादा गहन ।
यदि इस बात पर भरोसा है तुम्हे ,
तो इसे तलाश करने की जरूरत नहीं !

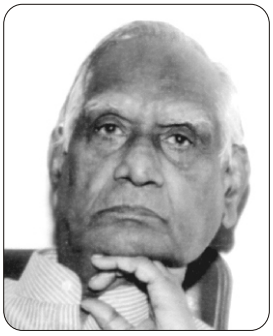

मयंक श्रीवास्तव के दो गीत

मयंक श्रीवास्तव
जन्म : 11 अप्रैल 1942
जन्म स्थान: फिरोजाबाद, ऊँदनी (उ.प्र.)
प्रमुख कृतियाँ : सूरज दीप धरे, सहमा हुआ घर, इस शहर में आजकल, उंगलियां उठती रहें, ठहरा हुआ समय, पांच गीत संग्रह एवं रामवती गीतिका संग्रह प्रकाशित।
संपर्क- 242, सर्वधर्म कॉलोनी, 'सी' सेक्टर, कोलार रोड, भोपाल-462042 (म.प्र.)
मो.- 09977121221
दूरभाष : 0755-2494449

1. चिड़िया : एक गीत

एक नंगे
पेड़ पर बैठी हुई चिड़िया
गा रही है जिन्दगी का गीत।

एक चिड़िया
बाँध कर पत्थर थकानों का
मौज से थिरका रही है पाँव
घोंसला
अपना बनाने को खदानों में
छोड़ करके जा रही है गाँव
पाँव घायल कर दिए
सारे बबूलों ने
हार को भी मान बैठी जीत।

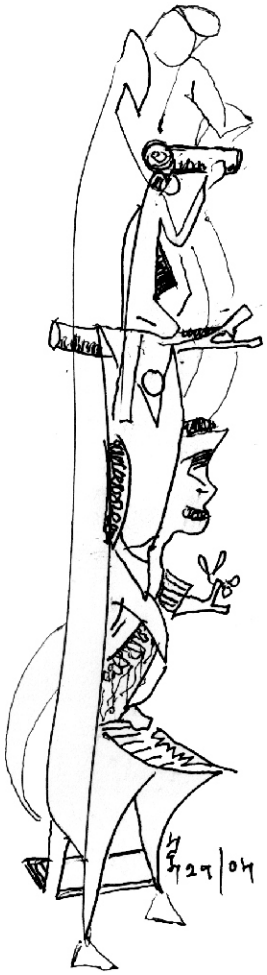

एक चिड़िया
सो रही है रेत के घर में
और आँखों में जमा विश्वास
शब्द ही क्या
व्याकरण तक हो गया बौना
किन्तु लिखना चाहती इतिहास
जिस्म टूटा
चाहता आकाश में उड़ना
आदमी बैठा हुआ भयभीत।

2. बूढ़े बरगद पर

अखबारों में नहीं छपी है
ऐसी कभी खबर
हवा बैठना नहीं चाहती
बूढ़े बरगद पर।

पीपल खड़ा उदास
बसेरा छोड़ गई चिड़िया
गीत आम पर नहीं बैठ कर
गाती कोयलिया
पगडंडी हो गई अचेतन
हँसती नहीं डगर।

खोई बचपन और
जवानी वाली चहल-पहल
गली-गली में सन्नाटे के
आलीशान महल
रोता हुआ गाँव मिलता है
हँसता हुआ शहर।

रामदीन की गाय
नहीं दिख रही उसारे में
कटुता आकर बैठ गई है
भाई चारे में
पोखर पत्थर बनी, ताल से
उठती नहीं लहर।

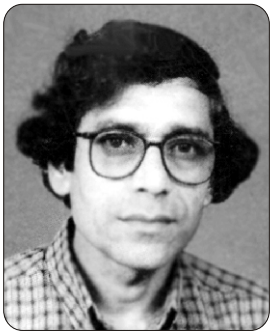

संतोष जैन की दो ग़ज़लें

संतोष जैन
जन्म : 22 मई, 1952 भैंसदेही, जिला- बैतूल (मध्यप्रदेश)
शिक्षा : बी-एस सी, बी-एड, एम.ए (हिन्दी एवम् अंग्रेजी साहित्य)
प्रकाशित कृतियाँ : 'रोशनाई', 'हमसफ़र'। (ग़ज़ल संग्रह)।
संपर्क-मस्ज़िद मोहल्ला, घोड़ाडोंगरी, बैतूल (म.प्र.)
मो.- 094256 93489

1. हूँ भगीरथ की तपस्या मैं अगर

तुम सुहानी भोर की पहली किरण
मैं कँवल की झील का वातावरण

हूँ भगीरथ की तपस्या मैं अगर
तुम हो गंगा का धरा पर अवतरण

हो कहानी तुम परी के देश की
मैं किसी बच्चे का हूँ अन्त:करण

रूप से चलकर हृदय पर तुम मिलो
मुक्त अभिनय से हो मेरा आचरण

सोन मछरी तलहटी में अनमनी
तुम हटादो हिम का अब ये आवरण

काव्य है जीवन अगर मेरे लिए
तुम हो इसके छंद का पहला चरण

गीत मधुरिम स्वप्न का हो तुम जिसे
गा रहा मेरा समर्पित जागरण

2. हम अक्सर द्वार के रंगीन...

खिलौने हाथ में आते ही बस्ते भूल जाते हैं
बहुत मसरूफ़ियत है लोग सिजदे भूल जाते हैं

बड़े लोगों की होती हैं मेरे यारो बड़ी बातें
वो कपड़े याद रख लेते हैं चेहरे भूल जाते हैं

नहीं जी पाएंगे बिल्कुल अगर ये याद रक्खेंगे
नगर के लोग अच्छा है कि रिश्ते भूल जाते हैं

अगर इतने से बचता है हमारा प्यार का रिश्ता
ख़ुशी से हम उधारी के वो रुपये भूल जाते हैं

बने होते हैं जाने कौन सी मिट्टी से वो यारों
बड़े होते ही जो नानी के क़िस्से भूल जाते हैं

भले लगते हैं सुतली में पिरोये आम के पत्ते
हम अक्सर द्वार के रंगीन पर्दे भूल जाते हैं

तआल्लुक़ टूटते बनते हैं मौसम के बदलने से
निकल आते ही स्वेटर हम भी मटके भूल जाते हैं

तुम्हीं जाने ग़ज़ल हो सच है लेकिन हम न जाने क्यों
तुम्हारे सामने अपने ही मिसरे भूल जाते हैं

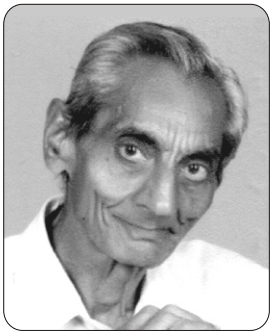

राधेलाल बिजघावने की कविता

राधेलाल बिजघावने
जन्म : 1 जुलाई 1937
जन्म स्थान : चारखेड़ा, हरदा, (म.प्र.)
प्रमुख कृतियाँ : बहस खत्म होने के बाद, कमीज़ पर, खरगोश की आँखें, खिड़की खोलने से पहले(रत्न भारती पुरस्कार), नवगीत : विचार और संवेदना, महानिद्रा (वागीश्वरी पुरस्कार), औरत के अन्दर की औरत (उपन्यास), वापसी(कहानी संग्रह) कविता : विचार और चेतना, कन्ट्रास्ट(नाटक संग्रह), नया सबक(बाल नाटक), जल संरक्षण से लाभ, घरेलू हिंसा और स्त्री चेतना(बाल साहित्य)।
संपर्क : - ई-8/73 भरत नगर (शाहपुरा) अरेरा कॉलोनी, भोपाल-462039 (म.प्र.)
मो.-098265 59989

घर के पैर

घर के पैर और जमीन नहीं थी
फिर भी वह चल रहा था।

चल रहा था घर
अपना विश्वास और इंसानियत की पीठ और कंधों पर
सवार होकर।
घर के सिर और कंधों पर जिम्मेदारियों का बोझ था।
जिसे वह ढो रहा था
और थक कर पोर पोर टूट रहा था।

घर खाली था
उसमें सोच विचार
खाद्य सामान, बर्तन कपड़े नहीं थे
फिर भी भूख, गरीबी और अभाव का आक्रोश
चुप चाप सह रहा था।

घर चल रहा था
मिट्टी बिछी सड़क और कटीली पगडंडियों पर
उसकी संवेदनाएँ के पैरों में छाले पड़ गये थे
फिर भी वह चल रहा था अनन्त की दिशा में।

घर निकम्मा था
उसके पास कोई काम नहीं था
वह काम की तलाश में यहां वहां भटक रहा था
पर उसे कोई काम नहीं दे रहा था।

घर का अपना कोई उद्देश्य आचरण और
चरित्र नहीं था
फिर भी घर
घर था और उसका अपना रोब था।
घर खाना बदोश की तरह यहां वहां घूम रहा था

घर में
घरेलू पन की कोई पहचान नहीं थी
पर घर आत्म सम्मान का गरुर
अपने भीतर समाये था।

घर मात्र चिड़ियों का घौसला था
जिसमें कोई रहना नहीं चाहता था।
आत्मीय संवेदना और रिश्तों का घर
मुर्दा घर था।

व्याख्यान : एक

– नर्मदाप्रसाद उपाध्याय (लोक संस्कृति मर्मज्ञ)

नाद ब्रह्म

हमारे यहाँ ध्वनि से नाद उत्पन्न हुआ हम नाद ब्रह्म की उपासना करते है।

संगीत हमारे यहाँ हमारे पुरखों ने बड़ी वैज्ञानिक दृष्टि सम्पन्नता के साथ उसे ईश्वर मान लिया, उसे देवत्व से जोड़ दिया और यह सबसे बड़ी उपलब्धि है कि संगीत आज हमारे लिए ईश्वर के रूप में है। यदि किसी और दूसरे रूप में होता, जिसके कारण हमारी आस्था खण्डित होती, हमारा विश्वास तिरोहित होता, तो संगीत उस रूप में नहीं होता जिस रूप में आज है।

संगीत को हमारे यहाँ माना जाता है कि वह ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न हुआ। उन्होंने उसे शिव को दिया, शिव ने सरस्वती को दिया, सरस्वती ने नारद को दिया, नारद ने गन्धर्वों और अप्सराओं को दिया और फिर उन्होंने भरत को दिया। एक यह भी है कि नारद को दिया और हनुमान को दिया और फिर यह उनके माध्यम से धरती के ऊपर आया। एक धारणा यह भी है कि नारद ने योग साधना की, जिसके परिणामस्वरूप संगीत पृथ्वी के ऊपर आया। एक धारणा यह भी है कि भगवान शंकर के मुख से पाँच राग निकले और छठवाँ राग कौशिकी है जो, माता पार्वती के मुख से निकला। और इस प्रकार की अनेक धारणाएँ हैं जिनके आधार पर यह स्थापित होता है कि संगीत जो है, उसे हमारे यहाँ ईश्वर का रूप माना गया है और उसे प्रकृति से भी जोड़ा गया है।

संगीत के सम्बन्ध में आप हमारे तमाम देवी-देवताओं को ले लीजिए। विष्णु शंख से जाने जाते हैं, आदिवीणा ब्रह्म से जानी जाती है, शिव के हाथ में डमरू है, कृष्ण बंशी से जाने जाते हैं, गणेश के हाथ में मृदंग है। ये तमाम वाद्यों को देवी-देवताओं से भी हमारे पुरखों ने जोड़ा और उसकी वजह यह भी थी, उसका कारण यह भी था, ताकि इस महान अनुशासन के प्रति कहीं हमारी आस्था खण्डित न हो, कहीं हमारा विश्वास खण्डित न हो और फिर यह परम्परा आगे चलकर देखिये, तो आप पाएँगे कि हमारे यहाँ ध्वनि से नाद उत्पन्न हुआ। हम नाद ब्रह्म की उपासना करते हैं।

यह नाद ब्रह्म क्या है? इसको हमारे ऋषियों से, मुनियों से, दीपों से, मंत्रों से जोड़ा गया और इसके प्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में हमारे यहाँ ओंकारेश्वर तीर्थ है। बारह ज्योतिर्लिंग में एक ओंकार माना जाता है। 'ओम' में ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों की प्रतिष्ठा मानी जाती है और 'ओम' के आकार की धाराएँ मिलकर उस ज्योतिर्लिंग के मन्दिर को घेरती हैं और आज भी यदि आप किसी मौन में, किसी सन्नाटे में उस ज्योतिर्लिंग के मन्दिर में बैठें, तो आपको 'ओम' की ध्वनि सुनायी देती है और इसीलिए उसे 'नाद ज्योतिर्लिंग' कहा गया है। ओंकारेश्वर को बारह ज्योतिर्लिंगों में नाद ज्योतिर्लिंग की संज्ञा दी गयी है। फिर हमारे यहाँ राग बने, उस ध्वनि के आधार पर और राग जो बने, 'रंज' धातु से राग बनता है। 'रंज' के दो अर्थ हैं; एक अर्थ होता है- 'रंगना' और दूसरा अर्थ होता है- 'रंजित करना' या 'आनन्दित करना'।

मतलब जो हमारे चित्त को भाव के ऐसे रंग में रंग दे, जिसकी परिणति आनन्द के रूप में हो, तो फिर उसे 'राग' कहा जाता है। राग के सम्बन्ध में अनेक धारणाएँ हैं। हनुमत मत है, दत्तेल, कोहिल और भरत और नाट्यशास्त्र- सभी में उसके बारे में विस्तार से विवेचन किया गया है। लेकिन एक दिलचस्प बात जो मैं आपको बताना चाहता हूँ, वो यह कि 'रागमाला' हमारे यहाँ बनी। खेमकरण, जो रीवा के थे, उनकी 'रागमाला' बड़ी प्रसिद्ध है और इसके बाद हनुमत मत की 'रागमाला' बनी। अभी एक मत प्रकाश में आया है कि चित्रकारों ने जो राग सर्वाधिक चित्रित किये, वो रागमाला चित्रण है, वो 'चित्रकारों की रागमाला' है।

तो हिन्दुस्तान में- भारतवर्ष में- ही केवल एकमात्र यह प्रयोग हुआ है, विश्व में और कहीं नहीं हुआ, जहाँ संगीत को, मेलोडी को, राग और रागिनियों को चित्रित किया गया है। आपके जो छः राग हैं, उन छः रागों के राग-पुत्र हैं, राग-वधुएँ हैं और ये परम्परा एक-दो वर्षों की नहीं है, पाँच सौ वर्षों की है और पाँच सौ वर्षों की इस परम्परा में जैनों का भी योगदान है। जो

पार्श्व मुनि हैं, उन्होंने 'संगीत समयसार' नामक ग्रन्थ रचा है। उसके बाद फिर अनेक ग्रन्थ राग-रागिनियों के रचे। उसके बारे में विस्तार से अभी जानने का यह प्रसंग नहीं है। समय बहुत अधिक लगेगा। लेकिन मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि पाँच सौ वर्षों की परम्परा में पहाड़ की तमाम शैलियों में, राजस्थान की तमाम शैलियों में, हमारे यहाँ मालवा की विभिन्न चित्र शैलियों में, दक्षिण भारत की शैलियों में सबमें राग और रागिनियों को चित्रित किया गया। हमारे यहाँ संगीत को प्रतिष्ठा देने के लिए ग्रन्थ बने। भरत के नाट्यशास्त्र से लेकर भोज का 'समरांगण सूत्रधार' ले लीजिये और उसके बाद 'संगीत सार' ले लीजिये, 'संगीत दर्पण' ले लीजिये, 'सारंगदेव' के ग्रन्थ को ले लीजिये, दामोदर के 'कुटनीमल' को ले लीजिये। ऐसे कई ग्रन्थों के बारे में विस्तार से बात की जा सकती है।

हमारे यहाँ संगीत के महान पुरुष हुए। वादन के क्षेत्र में, गायन के क्षेत्र में उनकी एक लम्बी परम्परा है। तानसेन से लेकर बैजू बावरा। तानसेन स्वामी हरिदास को तो भगवान कृष्ण का अवतार माना गया और तानसेन के बारे में अबुल फ़ज़ल ने 'आइने अक़बरी' में लिखा कि उसके जैसा एक हज़ार सालों से कोई गायक नहीं हुआ। छत्तीस गायकों की जो सूची दी है, उसमें शीर्ष पर तानसेन हैं। उन्होंने 'बुद्ध प्रकाश' नामक ग्रन्थ लिखा और हमारी परम्परा में खूबसूरत मोड़ तब आया, जब मुग़लों ने और मुसलमानों ने हमारे यहाँ एक सांस्कृतिक संस्कृति का आरम्भ किया। हमारे यहाँ सूफ़ी संगीत आया, नात गायी जाने लगी। ख़ुसरो ने क़ब्बाली की शुरूआत की और विशेष रूप से चिश्तिया सिलसिले में क़व्वाली बहुत अच्छे ढंग से आज भी गायी जाती है।

तो एक लम्बा सिलसिला हमारे यहाँ उसका चला। वाद्य बने। आप सब जानते हैं कि वाद्यों के अन्दर जो सबसे पुराना वाद्य है वो झुनझुना कहा जाता है, आदिवासियों में आज भी प्रचलित है और फिर तमाम तरह के। कालिदास ने अपने ग्रन्थों- 'अभिज्ञान शाकुन्तलं', 'मेघदूतं', 'मालविकाग्निमित्रं', 'रघुवंश'- में इन तमाम वाद्यों का विवरण दिया है, जिसमें नये-नये वाद्य हैं। 'पटह' नाम का वाद्य आपने कहीं नहीं सुना होगा। 'मर्दल' का नाम आपने कहीं नहीं सुना होगा। 'क्षुद्र घंटिका' का नाम नहीं सुना होगा। इस प्रकार के वाद्य जो हैं, ऐसे तमाम वाद्यों का उन्होंने विवरण दिया है। इसके बारे में बड़े विस्तार से चर्चा की जा सकती है। मध्यप्रदेश के सन्दर्भ में राजा मानसिंह तोमर, जिनकी वीणा बड़ी प्रसिद्ध है और हमारे यहाँ मानसिंह तोमर ने 'मान कुतूहल' ग्रन्थ लिखा, जो आज भी बड़ा प्रसिद्ध ग्रन्थ है। तानसेन का जैसे मैंने ज़िक्र किया, उन्होंने ग्रन्थ लिखा- 'बुद्धप्रकाश', उसका सत्रहवीं शताब्दी में अनुवाद हुआ था- 'तसरीके मौसिकी' नाम से और हाल ही में जामिया मिलिया इस्लामिया से उसका अंग्रेज़ी में भी अनुवाद हुआ है।

- **मनोज श्रीवास्तव** (संस्कृति चिन्तक)

व्याख्यान : दो

संस्कृति के उत्सवधर्मी पक्ष

मुझे जो विषय दिया गया- 'संस्कृति के उत्सवधर्मी पक्ष', तो विषय को देखकर मुझे लग रहा था कि हम लोग जिस दौर में हैं, उस दौर में उत्सवधर्मिता का थोड़ा-सा, एक निगेटिव कनोटेशन हो गया, यानी आरोप सा लग जाता है। यदि हम लोग बहुत ज़्यादा कार्यक्रम करें तो हम लोगों पर आरोप लग जाता है कि संस्कृति विभाग उत्सवधर्मी हुआ जा रहा है। जैसे कि हमने कोई स्थायी महत्त्व की वो चीज़ें नहीं दी हों। देखा जाए तो मध्यप्रदेश में जो संस्कृति विभाग है, वो 1800 कार्यक्रम साल भर में मध्यप्रदेश के अलग-अलग हिस्सों में करता है। उत्सव करता है, कार्यक्रम करता है। उसको देखकर कुछ लोग यह बात करते हैं। लेकिन इसी बीच जो स्थायी चीज़ें हैं, जो संस्कृति में की जा रही हैं, उस पर ध्यान नहीं जाता। ये प्रदेश, इसका जब विभाजन हुआ था तो खैरागढ़ का जो संगीत विश्वविद्यालय था, इतनी कीमती उपस्थिति थी मध्यप्रदेश की, यह हमसे छिन गयी थी। फिर उसके एवज में हम लोगों ने यहाँ राजा मानसिंह तोमर संगीत एवं कला विश्वविद्यालय स्थापित किया, आपने देखा होगा।

अकेले भोपाल को ही आप ध्यान से देखें, तो राज्य संग्रहालय आया है। आप देखेंगे तो ट्राइबल म्यूजियम आया है, शौर्य

स्मारक आया है और अभी रवीन्द्र भवन बन ही रहा है। इसी के साथ-साथ धर्मपाल शोधपीठ स्थापित हुई है जो इण्डोलॉजी पर काम कर रही है और विक्रमादित्य शोधपीठ है, जो कि गवर्ननेन्स के जो हायर आइडियल्स हैं। कहना चाहिए कि शासन करने के, प्रशासन करने के जो उत्कृष्ट प्रतिमान हैं, उनके साथ हमारी परम्परा की कितनी संगति है। हमारी परम्परा में ऐसा क्या है जो हमें बेहतर प्रशासन की ओर उन्मुख करे।

विक्रमादित्य जी और राजा भोज के बारे में जो एक पुस्तक लिखी गयी- 'सिंहासन द्वातिंसका', जो 'सिंहासन बत्तीसी' के नाम से सिद्ध है। हम लोगों को लगता है कि वो एक कहानी है जिसमें राजा भोज बार-बार उस सिंहासन पर- 'विक्रमादित्य के सिंहासन' पर जाने की कोशिश करते हैं और एक पुतली निकलकर आती है और एक कहानी सुनाती है और कहती है कि तुममें क्या वो गुण हैं और राजा भोज ड्रॉप-सेक्शन करते हैं और कहते हैं कि मैं इस गुण को अपने भीतर कल्टीवेट करूँगा फिर आऊँगा। वो उस गुण का अपने भीतर विकास करते हैं, उसके बाद फिर आते हैं। फिर दूसरी पुतली निकल आती है, फिर दूसरी कहानी सुनाती है।

आपको लगता है कि उसके भीतर कहा क्या जा रहा है? उसके भीतर कहा यह जा रहा है कि एन्श्रॉनमेन्ट के लिए, आपको गवर्नमेन्ट सर्विस में इण्टर करने के लिए, जैसे आजकल यूपीएससी आपका ऐथिक्स नाम का एक टेस्ट लेती है। यूपीएससी में आप देखेंगे, जनरल स्टडीज में एक टेस्ट है ऐथिकल इश्यूज पर। वो जो है, आपकी ऐथिकल गवर्ननेन्स को सुनिश्चित करने के लिए, एन्श्रॉनमेन्ट के लिए, सिंहासनारोहण के लिए, कुर्सी के सँभालने के लिए, पद पर आने के लिए आपके पास जो कुछ योग्यताएँ होनी चाहिए, उन योग्यताओं की, उन वर्च्यूज़ की वो कहानी है। विक्रमादित्य शोधपीठ इस तरह से कुछ काम कर रही है। ऐसी बहुत सारी चीज़ें हैं, जो कि स्थायी महत्त्व की हैं, जो की जा रही हैं।

लेकिन मैं कहूँ कि हमारी जो उत्सवधर्मिता है, वो उत्सवधर्मिता उन लोगों की उत्सवधर्मिता जैसी नहीं है, जो कि आपको न्यू ईयर पर अक्सर दिखाई पड़ती है। जब खाये और अघाये हुए लोग निकलते हैं अपनी बहुत ही स्पीडिंग व्हीकल्स के साथ और अपने पूरे उन्माद में भी रहते हैं, देखते भी नहीं आसपास, कि उसी समय उतनी ठंड में कोई है जो कि बिना कम्बल के फुटपाथ पर पड़ा हुआ है। वो उस तरह का जो जश्न है, उस तरह की उत्सवधर्मिता हमारी नहीं है। यानी किसी ने कहा था न-

यह जश्न मुबारक हो पर यह भी सदाकत है,
हम लोग हकीकत के एहसास से आरी हैं।
गाँधी हो कि ग़ालिब हो, इन्साफ की नज़रों में,
हम दोनों के क़ातिल हैं, हम दोनों के पुजारी हैं।

उस तरह की जश्न मनाने वाली उत्सवधर्मिता की मैं बात नहीं कर रहा। मैं उस उत्सवधर्मिता की बात कर रहा हूँ, जो क्रियेटिव है। मैं उस उत्सवधर्मिता की बात कर रहा हूँ, जो रचना को जन्म देती है। मैं उस उत्सवधर्मिता की बात कर रहा हूँ, जो सामाजिक वैषम्य को रेखांकित नहीं करती, बल्कि जहाँ पर सारी सामाजिक विषमताएँ, सारे वर्ग-भेद आकर खत्म हो जाते हैं। मैं उस तरह के उत्सवों की बात कर रहा हूँ, जो संस्कृति से होते हैं। अन्यथा तो क्या कहें-

ये जश्न, ये हंगामे, दिलचस्प खिलौने हैं,
कुछ लोगों की कोशिश है कुछ लोग बहल जाएँ।
वो जो कि वादा-ए-फरदा पर टल सकते हैं,
मुमकिन है कुछ अरसा इस बात पर टल जाए।

उस तरह के जश्न से संस्कृति को मुक्त करके एक ऐसी उत्सवधर्मिता की बात कर रहे हैं हम, जो कि हमारी आस्तात्विक पहचान है हमारी संस्कृति की, भारतीय संस्कृति की।

मैं भारतीय संस्कृति की दो विशेषताएँ मानता हूँ। एक तो उसका अरण्यमुखी होना और एक उसका उत्सवधर्मी होना। यदि आंकड़ों की शक्ल में बात करूँ, तो आप गेस कर सकते हैं कि मध्यप्रदेश में कितने मेले होते हैं? यानी एक साल के भीतर मध्यप्रदेश में कितने मेले होते हैं, उससे पता लगेगा हमारी उत्सवधर्मिता का; और मैं 'मड़ई मेले' जैसे आदिवासी क्षेत्र में होते हैं, उनकी भी बात नहीं कर रहा हूँ। मैं तो उसकी बात कर रहा हूँ जो कि हमारे आसपास जिलों में दिखते हैं।

1961 में, वो एकमात्र साल है, जब मेलों की जनगणना हुई थी, मेलों का सेन्सस हुआ था और उसमें पाया गया कि मध्यप्रदेश में- यानी जो अविभाजित मध्यप्रदेश है, मैं उसकी बात कर रहा हूँ- 1238 मेले होते हैं। 1238 मेले! और यह हमारे लोक की सम्पन्नता, लोकजीवन की समृद्धि, उसकी जो उत्सवधर्मिता है, वो उसके प्रतीक हैं और हम लोग चूँकि शासकीय सेवाओं में आते हैं अक्सर तो कॉन्वेन्ट एजुकेशन प्राप्त करके आ जाते हैं या जो भी किताबी एजुकेशन प्राप्त करते हैं। हम लोगों को क्या सिखाया जाता है, कि चार महत्त्वपूर्ण पर्व हैं- राखी है, दशहरा है, दीपावली है और होली है। ये जो लोकपर्व हैं, ये जो लोकजीवन है, जो कहना चाहिए कि हमारे पंचांग का,

हमारे संवत् का अंश होता है, इसकी ओर हमारा ध्यान नहीं जाता।

प्रशासन में कई बार मैंने देखा कि अधिकतर दुर्घटनाएँ ऐसे समय में होती हैं, जो लोक की दृष्टि से तो बहुत महत्त्वपूर्ण रहती हैं लेकिन प्रशासन के दिमाग में आती ही नहीं हैं। जैसे प्रशासन के दिमाग में कभी 'सोमवती अमावस्या' क्या होती है नहीं आता। 'भूतड़ी अमावस्या' नाम की क्या चीज़ होती है, प्रशासन को नहीं समझ में आता। ये लोक को समझ में आता है। लोक उस 'सोमवती अमावस्या' के पर्वों को जीता है। लोक 'भूतड़ी अमावस्या' को जीता है। प्रशासन की किताब में कहीं था नहीं, तो होता यह है कि अधिकतम दुर्घटनाएँ मैंने देखी हैं। चाहे वो रतनपुर की दुर्घटना हो, चाहे वो ओंकारेश्वर की दुर्घटना हो, चाहे वो हरिद्वार की दुर्घटना हो, अधिकतर स्टेमपीड की जो घटनाएँ होती हैं, वो ऐसे सोमवती अमावस्या पर होती हैं और उसके पीछे कारण यही है कि लोकजीवन की जो उत्सवधर्मिता है, हमारी संस्कृति की जो उत्सवधर्मिता है, उसका हमें संज्ञान नहीं है, उसका हमें अता-पता नहीं है और इसलिए उसके प्रति हमारी असावधानी है।

सच तो यह है कि हम लोग उस स्थिति में आ गये हैं, जहाँ हमें हमारे वर्ष की, हमारे नववर्ष की- अभी मनाएँगे हम 18 मार्च को, जब भारतीय नववर्ष की शुरूआत होगी- उसके बारे में भी हमें पूरा-पूरा पर्याप्त संज्ञान नहीं है, तभी तो वो उत्सवधर्मिता हमारे हाथ से छूट रही है। वो जिसे हम 'विक्रम संवत्' कहते हैं, उस संवत् के साथ जो त्रासदी घटी है, उसको कभी आप ध्यान से देखें। वो त्रासदी क्या है, कि उसको आजकल भारतीय नववर्ष नहीं कहते लोग, उसको कहते हैं 'हिन्दू नववर्ष'। जैसे कि वो कोई कम्युनल क़िस्म की चीज़ हो, जैसे कि वो कोई साम्प्रदायिक पहचान वाली चीज़ हो, जिसका कि कोई एक ब्रेकेट हो, जिसका कि कोई एक कोष्ठक हो, जिसके भीतर उसकी पहचान बन्द हो, उसकी पहचान की पैकेज़िंग की गयी हो। इस तरह से उसको बताते हैं और जो ग्रेगोरियन कैलेण्डर है वो सेक्यूलर कैलेण्डर है, वो धर्म निरपेक्ष कैलेण्डर है, वो राष्ट्रीय कैलेण्डर है, वो उस रूप में बताया जाता है।

अब मैं सोचता हूँ कि 1482 में जब ग्रेगोरियन कैलेण्डर आया, कैसे आया। पोप ग्रेगरे सप्तम् थे, वो उसको लाये और किस उद्देश्य से लाये, क्योंकि उनको जीसस क्राइस्ट की जो डेट थी, उसको रि-अरेन्ज करना था। उनका जो 'बड़ा दिन' कहलाता है वो पहले अप्रैल में मनाया जाता था, उसको वो शिफ्ट करके विण्टर सॉलिस्टिड के पास लाना चाह रहे थे, इसलिए उन्होंने 25 तारीख चुनी। माने हुआ क्या कि एक रिलिजस हैड ने, एक धार्मिक प्रमुख ने एक धार्मिक उद्देश्य के लिए जिस कैलेण्डर को रचा, वो कैलेण्डर आज की तारीख में सेक्यूलर है। और जो विक्रम संवत्, जो कि विक्रमादित्य के द्वारा प्रवर्तित हुआ, विक्रमादित्य एक राजा थे, एक एडमिनिस्ट्रेटिव हैड थे, उन विक्रमादित्य के द्वारा प्रवर्तित, एक शासकीय या प्रशासकीय अधिष्ठाता के द्वारा प्रवर्तित वो कैलेण्डर, जो कि एक प्रशासकीय उपलब्धि को कमम्रेट करने के लिए हुआ था। यानी हम लोगों ने- भारत ने- हूणों को हराया था विक्रमादित्य के नेतृत्व में, तो वो एक एडमिनिस्ट्रेटिव एचीवमेन्ट थी, प्रशासकीय एचीवमेन्ट थी।

तो एक एडमिनिस्ट्रेटिव हैड के द्वारा, एक एडमिनिस्ट्रेटिव एचीवमेन्ट को कमम्रेट करने के लिए जो कैलेण्डर बनाया गया, आज की तारीख में वो कम्युनल है और इसलिए यह हुआ है कि उस कैलेण्डर के साथ जो चीज़ें आनी चाहिए, जो हमारी उत्सवधर्मी चीज़ें हैं, वो चीज़ें अब नहीं आतीं। हम आजकल उत्सव दूसरे तरीके से मनाने लगे हैं। उदाहरण के लिए आज समाज गुरु पूर्णिमा मनाता है, क्योंकि वो उस कैलेण्डर से चल रहा है। राज्य जो है वो शिक्षक दिवस मना रहा है 5 सितम्बर के दिन। गुरु पूर्णिमा नहीं मना रहा! राज्य का काम है शिक्षक दिवस मनाना। तो राज्य और समाज के बीच में एक फाँक है, जिसमें राज्य तो मनाता है 5 जून को पर्यावरण दिवस, उसका उत्सव है पर्यावरण दिवस; हमारा समाज मनाता है हरियाली तीज, हरियाली अमावस्या, वो हमारे इस कैलेण्डर से निकला है।

तो जो हमारी उत्सवधर्मिता है, वो हमारी उत्सवधर्मिता धीरे-धीरे इस कैलेण्डर की उपेक्षा के कारण खत्म हो रही है, वो हाशिये पर जा रही है। जबकि आप देखें तो 5 जून के दिन पर्यावरण सबसे लुटी-पिटी हालत में होता है और हरियाली तीज या हरियाली अमावस्या जिसे हम कहते हैं, उस समय पर्यावरण अपनी पूरी सम्पन्नता में, अपनी पूरी विविधता में, अपनी पूरी समृद्धि में, सुषमा में दिखाई देता है। वो चीज़ है। उस समय तो वाकई लगता है- हाँ, वाकई प्रकृति उत्सव मना रही है और हमें भी उस उत्सव में सम्मिलित होना चाहिए तो ऐसी बहुत सारी चीज़ें हैं।

हो क्या रहा है, कि राज्य और समाज के बीच में एक दूरी है। एक फाँक है, एक फ़र्क है और उस फ़र्क ने ही राज्य को, वो समाज की सहजता जो थी, उससे अलग कर दिया है और ये

दूरी जानबूझकर अंग्रेज़ों ने इसलिए पैदा की, क्योंकि इस दूरी के बीच ही वो अपना स्थान बना सकते थे। इस अन्तराल में ही उनका स्थान था। क्योंकि अंग्रेज़ अपने को भारतीय समाज में अपने होने की स्ट्रेक्चरल वेलिडिटी को कभी भी सिद्ध नहीं कर सकते थे। क्योंकि वो यहाँ के लिए पराये थे। वो लोकेट ही नहीं कर सकते थे अपने होने को, इसलिए उनके लिए ज़रूरी था कि वो कहें कि समाज एक तरफ रहे, राज्य एक तरफ रहे और दोनों के बीच में डिस्टेन्स रहे, उसी में हमारा सेक्यूलरिज़्म है।

यदि हम यह बात करते हैं कि हमें ऑर्गेनिक फूड खाना चाहिए, यदि हम यह कहते हैं कि हमारा ऑर्गेनिक एग्रीकल्चर होना चाहिए तो हम ये भी तो सोचें कि हमारा ऑर्गेनिक स्टेट होना चाहिए, हमारा राज्य भी उतना ही ऑर्गेनिक होना चाहिए। अपने प्रकृतिस्थ सहज अपनी परम्पराओं के प्रति किसी भी क्षमा याचना के बिना उनको मनाने के लिए तत्पर, वो ही उत्सवधर्मिता, उसकी मैं बात कर रहा हूँ।

उसका महत्त्व क्या है? उत्सव होना क्या है? उत्सव होने का सबसे पहला अर्थ है- हायरार्कीज़ का खत्म होना, ऊँच-नीच का खत्म होना, भेदभाव का खत्म होना, छोटे-बड़े का खत्म होना। जहाँ हायरार्कीज़ का डिजॉल्यूशन हो उस जगह मेला है, जहाँ हायरार्कीज़ के अधिक्रम की समाप्ति हो उस जगह उत्सव है, जहाँ आपको औपचारिकताओं का ध्यान रहे, जहाँ आपको प्रोटोकाल का ध्यान रहे, समझ लीजिये वो उत्सव नहीं है। उत्सव वो है जहाँ यह चीज़ डिजॉल्व हो जाती है- और ऐसे मेले लगते थे। ऐसे मेले होते हैं। ऐसे उत्सव होने चाहिए। संस्कृति वही चीज़ है, जो इस तरह की औपचारिकताओं से आपको मुक्त करती है और आपको प्रकृतिस्थ बनाती है और आपको अपने प्रति सहज होना। क्षमायाची नहीं होना है। हम होने के लिए क्षमायाची हुए चले जाते हैं।

इसलिए कोशिश यह होनी चाहिए कि हमारे समाज की जो मूल प्रकृति थी, हमारे समाज की जो सहज भावना थी, जिसमें एक तरह की उन्मुक्ति थी। यानी उत्सव होना उन्मुक्त होना है। उत्सव होना यानी एक तरह की स्वतंत्रता के एहसास में होना। एक तरह की स्वायत्तता है और वो स्वायत्तता ऐसी नहीं है कि हम अपनी-अपनी ढपली पर अपना-अपना राग बजा रहे हैं और हम अपने घर पर बैठकर जश्न मना रहे हैं। उसमें एक तरह की कलेक्टिविटी है, वो सबके साथ होना है और इस बात से मैं अपनी बात खत्म करूँगा, कि साथ होना ही 'सार्थ' होना है। धन्यवाद.

व्याख्यान : तीन

संगीत मनुष्य की सार्वभौमिक भाषा

मैं तो सितार को अपनी वीणावादिनी की वीणा का आधुनिक अवतार मानता हूँ

– **पद्मश्री रमेशचन्द्र शाह** (मूर्धन्य साहित्यकार)

मित्रो! आज ये बड़े ही खुशी की बात है कि इस विषय पर जो भारतीय चित्त की अपनी विशेषता है, भारत की जीवन सम्बन्धी जो अनुभूति है, जो कल्पना है, जो सारा सोच-विचार है, उसकी जो बात है, देवी भागवत पर एक बहुत ही जबरदस्त किताब है, मेरी बेटी लायी थी, अभी मैं वो पढ़ रहा था तो मैं चकित रह गया। ऐसा मनोरम उपन्यास है वो, कि जिसका ठिकाना नहीं और उसमें घोर दार्शनिक बातें हैं। देवी महात्म्य से सम्बन्धित बातें हैं, तंत्र की बातें हैं, लेकिन इतने औपन्यासिक, रोचक ढंग से लिखा गया कि जिसका ठिकाना नहीं। क्या कारण है?

इसलिए मुझे बड़ी खुशी हुई कि दो-दो पत्रिकाएँ का जो आपने आज लोकार्पण करवाया। इनसे तो हम परिचित हैं, जो आपकी 'कला समय' है, बीस वर्ष से देख ही रहे हैं हम आपका जलवा; लेकिन 'शिवम् पूर्णा' जो है, इसमें भी मुझे बड़ा सुखद आश्चर्य हुआ कि ये भी आप कर रहे हैं, पर्यावरण की तरफआप सजग हैं और उसको इतनी अच्छी तरह से आप सामने रख रहे हैं और मैं पूरी उम्मीद करता हूँ, पूरा भरोसा रखता हूँ कि मध्यप्रदेश, जैसे कि और भी कई मायनों में यह पहल कर रहा है अन्य प्रान्तों से,

एक ऐसी होड़ नहीं, प्रतिद्वन्द्विता नहीं, लेकिन अपने ढंग से कुछ इस तरह के काम कर रहा है जो एकाएक दूसरों को सूझते नहीं हैं। मैं तो उत्तरप्रदेश का पक्षपाती हूँ, लेकिन यहाँ आकर मैं देख रहा हूँ कि अब उत्तरप्रदेश तो बहुत ही एकदम अराजक और केयोटिक लगने लगता है इसके सामने। लगता है कि सारे काम तो यहीं हो रहे हैं- उत्सव सम्बन्धी भी और हर कला सम्बन्धी भी। सारे काम असल तो यहीं हो रहे हैं।

और ऐसी बात नहीं है, अलक्षित नहीं जाता है। देखने में लगता है कि इतना सारा जीवन हमने बिता दिया, कोई देखने वाला नहीं, सुनने वाला नहीं, ऐसा लगता है हमको। लेकिन अभी जैसे नर्मदाप्रसाद जी ने याद किया, बैठे हैं जो सामने राम अधीर जी। अब देखो, यानी याद है कि राम अधीर ने क्या किया है। ये होना चाहिए, स्मृतिवान समाज होना चाहिए। आज ये सबसे भयानक स्थिति है, किसी को कोई मतलब नहीं है। आप लिखते चले जाइये, आपको पता नहीं चलता। **हिन्दी का लेखक दुनिया का सबसे अभागा प्राणी है, उसे पता ही नहीं चलता, कौन उसे पढ़ रहा है, नहीं पढ़ रहा है। ये अवार्ड मिलना, सम्मान मिलना, इससे लेखक को सन्तोष नहीं होता है। मुझे समझने वाला कोई है, ये जानने से जो सन्तोष मिलता है, उसका दुनिया के किसी सम्मान से कोई मुकाबला नहीं है। ये सन्तोष चाहिए कि- हाँ, मेरी तपस्या व्यर्थ नहीं गयी है। मुझे लोग जानते हैं, समझते हैं।**

मित्रो! मैं वैसे तो संगीत में बिल्कुल ही कोरा हूँ, लेकिन साहित्य में ही सारा जन्म मैंने खपाया है, शुरू से ही, लेकिन ये मेरा सौभाग्य है कि मेरा शहर जो अल्मोड़ा है, उत्तराखण्ड का एक कस्बा, इतना संगीत प्रेमी कस्बा, शायद ही कहीं हो, ऐसा अद्भुत, कोई राग ऐसा नहीं है! मैं कुछ नहीं जानता, मुझे कुछ नहीं सीखने दिया। मेरे पिता सितारवादक थे। मेरे दादा ने सितार इण्ट्रोड्यूज किया उस कस्बे में पहली बार और बचपन से ही सितार की झंकार मेरे कानों में गूँजती रही है और **मैं तो सितार को अपनी वीणावादिनी की वीणा का आधुनिक अवतार मानता हूँ।** शुरू से ही सुनता रहा हूँ। वो तो सितार के साथ मेरे प्राणों की जैसे लय मिली हुई है और तमाम, सारे जितने उत्सव थे, चाहे होली हो, चाहे रामलीला हो- 'ओपेरा' जिसे कहते हैं पश्चिम में- ऐसा अद्भुत ओपेरा ग्यारह दिन का चलने वाला रामलीला का, मैं नहीं समझता भारत में कहीं और जगह भी होता होगा। कोई क्लासिकल राग ऐसा नहीं है जो उन गीतों में, उस रामलीला नाटक में नहीं आता हो। उत्तरप्रदेश की लावणी से लेकर ठेठ क्लासिकल म्यूज़िक के सारे राग, यहाँ तक कि हमारे जैसे निपट गँवार, जिसने कभी सीखा ही नहीं, संगीत सीखने नहीं दिया हमारे पिताजी ने। क्योंकि उनको कहा जाता था, ये तो सितार के पीछे पागल हो गया है और इसने सारा अपना बिजनेस चौपट कर दिया है और सब बर्बादी के लिए इनका सितार है। मेरे पिता को भीतर ही भीतर जो कष्ट पहुँचता होगा न, तो उन्होंने मुझे हाथ नहीं लगाने दिया सितार को बिल्कुल। उन्होंने कहा- नहीं, मेरे पाँव पर पाँव मत रखो।

लेकिन उस संगीत में, मैं क्यों बात कर रहा हूँ, मैं जानता हूँ ऐसे शहर सिर्फ़ अल्मोड़ा नहीं, अनेक असंख्य कस्बे और शहर हैं, जहाँ संगीत का यह माहौल बराबर रहा और जिसके कारण मेरे जैसा निपट गँवार व्यक्ति संगीत में राग को पहचान सकता है। कोई भी गा रहा हो, मैं पहचान लेता हूँ कि कौन-सा राग गाया जा रहा है। ये किसकी? बिना सीखे, ये कानों की जो ट्रेनिंग होती है, मित्रो, कविता भी कान की चीज़ है। खाली पढ़ने की चीज़ नहीं है, जब तक कान में- नाद की बात कही ओंकारेश्वर का बखान करते हुए नर्मदाप्रसाद जी ने। कितनी बड़ी बात है ये, कि वो नाद, उसका पीठ है। तो ये ट्रेनिंग जो है, आप इसके लिए प्रयत्न कर रहे हैं, आपकी पत्रिका इस बारे में लोगों को सजग बनाये।

अब देखिए, उस्ताद सिराज खान ने खुद प्रोत्साहित किया अपने सुपुत्र को कि तुम ये तमाम एक्सपेरीमेन्ट करो और उन्होंने लिखा है कि एक कलाकार के बेटे की बड़ी मुसीबत होती है। साहित्यकार के बेटे की ये मुसीबत नहीं होती है। कोई साहित्यकार का बेटा साहित्यकार बनता नहीं है पहले तो और भगवान की बड़ी कृपा है, लेकिन अगर बन भी जाए तो बड़ी मुसीबत हो जाए। वो बेचारा कहीं का नहीं रहता, वो गड़बड़ होता है। **लेकिन संगीतकार का बेटा होना तो पूर्वजन्म का प्रताप है। वास्तव में उसका पिता अपना गुरु का रोल पूरी ईमानदारी से अदा करता है** और उस्ताद असद खान ने भी लिखा है अपने पिताजी के बारे में कि- ''मेरे पिता ने मेरी स्वायत्त-स्वतंत्र विकास-यात्रा में कभी बाधा नहीं डाली। मुझे अपना रास्ता चुनने दिया और मैं जो ये तरह-तरह के प्रयोग करता हूँ- रॉक में और न जाने क्या-क्या!'' उसको वह 'कॉलोब्रेटिव म्यूज़िक' कहते हैं। ऐसा नहीं है कि कोई छुआछूत हम मानते है हम पाश्चात्य संगीत को भी। भारतीय संगीत का हाजमा ऐसा तगड़ा है, जैसे आपकी सभ्यता का हाजमा ऐसा तगड़ा है कि तमाम विजातीय प्रभावों को पचा सकता है वो। औरों का हाजमा इतना तगड़ा नहीं है। तो ऐसे आपका संगीत भी पचा सकता है। उसकी अन्दरूनी ताकत है। उन्होंने कहा है कि- ''मैंने ये तमाम रॉक, लाउन, जैज, फ़्लेमिंगो, फ़्यूजन, सूफी सारे संगीत और लोक

संगीत की भी शैलियों का साथ-साथ में उपयोग किया है और ये मेरे पिता के प्रोत्साहन पर किया है। उन्होंने मुझे अपना अलग रास्ता चुनने की पूरी स्वतंत्रता दी।''

और यह तो आप जानते हैं कि संगीत जो है वो मनुष्य की सार्वभौमिक भाषा है और ये बड़े सुख की बात है कि आज आपको इस समय के इतने बड़े सितार वादकों को सुनने को मिलेगा, बल्कि हमारे प्रतिभाशाली तबला वादक रामेन्द्र सिंह सोलंकी और रोमनदास पखावजी को भी सुनने मिलेगा।

ये जो है, संगीत में हमें आज़ादी तो रहती है, लेकिन एक अनुशासन में रहते हैं। जितना डिसिप्लीन संगीतकार पालन करते हैं, उस डिसिप्लीन का 1/10 भी अगर लेखक बनना चाहने वाले लोग करते, तो हिन्दी साहित्य का बहुत भला होता, मुझे ऐसा लगता है। ऐसा नहीं है, बिल्कुल नहीं है।

हमारे यहाँ तो अभी-अभी लिखना सीख लिया, हमारी पीढ़ी में ही, बाद की पीढ़ी में हुआ। हर लेखक यह समझता है हिन्दी साहित्य का इतिहास उसी से शुरू हुआ है और उसी से खत्म हो जाने वाला है। ये भयानक बात हुई। अज्ञेय ने जो किया, निराला ने जो किया, प्रसाद ने जो किया, सब उनके किये-धरे पर पानी फेर दिया गया है। पिछले चालीस सालों से मैं हर मंच पर ये कहता हूँ। मुझमें खूब दुश्मन बनाने की प्रतिभा है और खूब दुश्मन मेरे बने हैं और मैं इसको कहता हूँ, क्योंकि सच्ची बात है। इसका मुझे दर्द है कि सबके किये-धरे पर पानी फेरा है। अनुशासन नहीं है। बिल्कुल, कुछ सीखना ही नहीं। सब सीखे हुए, एक आइडियालॉजी मिल गयी, बनी-बनायी, कम्युनिस्ट हो गये तो आप साहित्यकार हो गये, और कुछ चाहिए ही नहीं आपको साहित्यकार बनने के लिए। ये हालत कर दी। संगीत में ये बदतमीजी और ये वाहियातपन चल ही नहीं सकता है। बिल्कुल, किसी हालत में नहीं चल सकता। साहित्य में ये चल सकता है, संगीत में नहीं चल सकता।

संगीत का महत्त्व क्या है, आप जानते हैं। आपने शुरू से पढ़ा है, 'ऑल आर्ट इंस्पायर टु द कण्डीशन ऑफ़म्यूज़िक'। ये इण्डियन एस्थेटिक्स में कहा है, हर कला संगीत बनना चाहती है। हर कला की सबसे बड़ी महत्त्वाकांक्षा ये होती है कि वह नाद संगीत की स्थिति को प्राप्त करे। वो उसका चरम बिन्दु माना जाता है और हमारे वहाँ तो ये है ही है। भले ही हमने साहित्य को सेण्टर में रखा है, संगीत को नहीं, लेकिन ये जानी-मानी बात है कि संगीत के क्षेत्र में कितनी वैरायटी और कितना जबरदस्त काम यहाँ पर हुआ है। ये आपका सौभाग्य है कि ऐसी परम्परा में आप दीक्षित हुए हैं और आपको ऐसी-ऐसी चीज़ें सुनने को मिली हैं।

मुझे याद है, हमारे पास था क्या? कोई पत्रिका नहीं, कोई लाइब्रेरी नहीं, कुछ नहीं। सिर्फ़ गीता प्रेस, गोरखपुर से निकलने वाला 'कल्याण', उसके विशेषांक। मेरे साथी मज़ाक उड़ाते थे दो बातों के लिए, कि एक तो तुम जाकर दोपहर में औरतों के साथ बैठ जाते हो वहाँ रघुनाथ मन्दिर में। क्यों? क्योंकि 'योगवशिष्ठ' की कथा वहाँ हो रही थी और अद्भुत कथा होती थी। कथावाचन जिसने नहीं सुना, उसका आनन्द नहीं मिला, वह कैसे साहित्यकार बन जाता है, मेरी समझ में नहीं आता। लेकिन साहब, वो उसको सुनने का, ठीक है भैया, महिलाओं के बीच में ही हो रहा है तो क्या करें? ठीक है, ऐसी क्या मुसीबत है, महिलाओं में क्यों नहीं बैठेंगे हम वहाँ? तो हमने सारा 'योगवशिष्ठ' कथावाचन से सीखा। और मेरे साथी कहते थे, हॉकी खेलने जा रहे हो और फिर भी 'कल्याण' का विशेषांक बगल में दबा हुआ है, कि वहाँ से लौटेंगे तो ये पढ़ेंगे। ये क्या पागलपन है? लेकिन ये पागलपन पैदा किया हमने। हम समझते हैं कि ऐसा पागलपन होना चाहिए आदमी के अन्दर। तो वो था। दो ही पत्रिका आती थी। एक 'कल्याण' आता था और एक 'संगीत'। बहुत बाद में हमको पता चला, कई लोगों को अब भी पता नहीं, कि जो काका हाथरसी हैं, वह निकालते हैं 'संगीत'। 'संगीत' की एकमात्र पत्रिका भारतवर्ष में, बस उसी को देख-देखकर हमने किसी तरह चोरी-छिपे हारमोनियम में कुछ गाने-आने निकालने शुरू किये। तो जो संगीत का जो संस्कार है वो उसने डाला और ये 'कल्याण' ने।

ये जो चीज़ें हैं, ये हमारे लिए बहुत आवश्यक हैं। और पढ़ने का संस्कार! कैसे पढ़ें? सबसे ज़्यादा खुशी हुई मुझे इन पत्रिकाओं का विमोचन करते हुए कि ये संस्कार बढ़ेगा। घरों में जाओ तो पता चले। आप किसी मराठी के घर में जाइए, दो-चार साहित्य की चीज़ें मिलेंगी ही मिलेंगी। आप हिन्दी प्रदेश के कलेक्टर के वहाँ चले जाओ या किसी के वहाँ चले जाओ, आपको वहाँ अंग्रेज़ी का बहुत कुछ मिल जायेगा, लेकिन हिन्दी की एक किताब नहीं मिलेगी। भयानक बात है! मैंने दक्षिण भारत में देखा, बंगालियों के वहाँ तो क्या कहने! वो अपने साहित्य को प्यार करते हैं। कोई कविता संग्रह आता है और छपते ही बिक जाता है और यहाँ तो यह हालत है कि कविता को तो कोई खरीदता ही नहीं है। अनलैस और बहुत ही ऐसे क़िस्म की कविता ही है, जो कि कविता ही नहीं है। वो अलग बात है।

ये जो चीज़ है, ऐसे आयोजनों की सबसे बड़ी सार्थकता यही है। देखिए कि इतनी विचारोत्तेजक बातें सुनने

को मिलती हैं और अभी उतना ही भावोत्तेजक संगीत आपको सुनने को मिलेगा। मैं बहुत-बहुत कृतज्ञ हूँ आपका, कि आपने मुझे ये मौका दिया कि इतनी अच्छी बातचीत सुनने को मिल गयी और अब इतना अच्छा संगीत भी आप सामने सुनेंगे। धन्यवाद.

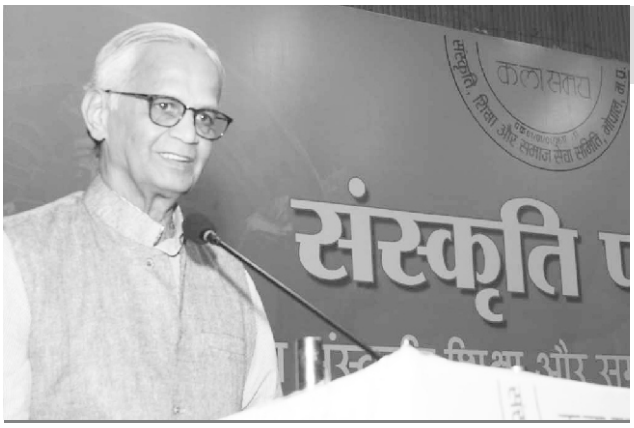

- पं. किरण देशपाण्डे (संगीतविद्)

संस्कृति पर्व - 2

संगीत और कला सभ्य और सांस्कृतिक समाज के प्राणतत्त्व हैं।

'कला समय परिवार' का आधुनिक समाज के साथ तालमेल देखते हुए, नये स्वरूप में अवतरित होना, सचमुच स्वागत योग्य कदम है। मैं अपनी और आप सबकी ओर से इस 'कला समय टीम' को बहुत-बहुत बधाई और शुभकामनाएँ देता हूँ। मेवाती घराने के अत्यन्त प्रतिष्ठित सितार वादक और पिता-पुत्र जोड़ी को साक्षात् सुनना आज एक अलौकिक अनुभव होगा हम सबके लिए। इस शाम को अविस्मरणीय बनाने के लिए और मुझे बुलाने के लिए श्रीवास जी और आयोजकों को मन:पूर्वक धन्यवाद।

पद्मश्री रमेशचन्द्र शाह साहब बाईस साल तक मेरे पड़ोसी रहे हैं। सुबह-शाम उनके यहाँ बैठना-उठना होता था और ये मैं मेरा सौभाग्य समझता हूँ। मनोज जी आज मध्यप्रदेश के संस्कृति के नायक हैं। उपाध्याय जी, पलाश जी के साथ एक सूत्र में 'कला समय' के मंच को शेयर करना मेरे लिए सुखद और अविस्मरणीय अनुभव है। मैं आपके और संगीत के बीच में नहीं आना चाहता। पुन: शुभकामनाएँ, बधाई। नमस्कार! ■

कला समय
का
आगामी विशेषांक
''विलुप्त होती लोक-कलाएँ''
अप्रैल-मई 2018
रचनाएँ, चित्र, आलेख, शोध आमंत्रित

संपर्क - जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016
फोन : 0755-2562294, मो.-94256 78058,
ई-मेल : kalasamaymagazine@gmail.com / bhanwarlalshrivas@gmail.com
- संपादक

कला समय
के संबंध में स्वामित्व तथा अन्य विवरण विषयक
घोषणा पत्र
फार्म - IV

1. प्रकाशक का स्थान - जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016
2. प्रकाशन की अवधि - द्वैमासिक
3. मुद्रक का नाम - भँवरलाल श्रीवास
   राष्ट्रीयता - भारतीय।
   पता - जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016
4. प्रकाशक का नाम - भँवरलाल श्रीवास
   राष्ट्रीयता - भारतीय।
   पता - जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016
5. संपादक का नाम - भँवरलाल श्रीवास
   राष्ट्रीयता - भारतीय।
   पता - जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016
6. उन व्यक्तियों के, जो समाचार पत्र के स्वामी हैं और उन भागीदारों या शेयरधारकों के, जो कुल पूंजी के। प्रतिशत से अधिक अंश के धारक हैं, नाम और पते।
   नाम - भँवरलाल श्रीवास
   पता - जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016

मैं भँवरलाल श्रीवास घोषणा करता हूँ कि ऊपर दी गई विशिष्टियाँ मेरे सर्वोत्तम ज्ञान और विश्वास के साथ सही हैं।

तारीख - 1 मार्च 2018
भँवरलाल श्रीवास
प्रकाशक के हस्ताक्षर

स्मृति शेष

भारत भवन के प्रथम मुख्य प्रशासनिक अधिकारी रहे स्व. श्री देवीलाल बापना

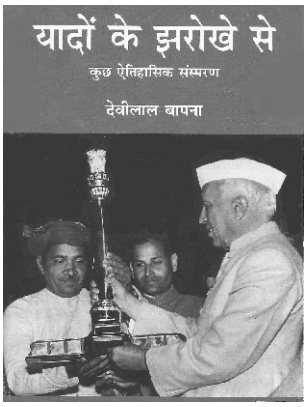

93 वर्ष की वय पार कर चुके श्री देवीलाल बापना का दिल्ली में उनके नये निजी आवास पर 28 दिस. 2017 को देहावसान होने की खबर अगले दिन दूरभाष पर उनके पुत्र श्री धर्मेन्द्र बापना ने मुझे दी जो मैंने भारत भवन में और भोपाल में अन्यत्र पहुँचाई। उनकी श्रीमती जी ठीक एक वर्ष पूर्व दिवंगत हो चुकी थीं। बड़े उनके एक पुत्र और छोटी पुत्री अपने-अपने परिवारों सहित दिल्ली में रहते हैं। पिछले दिनों ही श्री देवीलाल बापना अपने पौत्र का विवाह संपन्न करा पाए थे। उनसे मेरा पहला परिचय 1994 में उनके भारत भवन के मुख्य प्रशासनिक अधिकारी पदस्थ होने पर हुआ,जो पारिवारिक निकटता दोनों के परिवार इधर-उधर चले जाने के उपरांत भी अंत तक बनी रही। हमारे परिवार दो वर्ष पूर्व अंतिम उनके दिल्ली आवास पर मिले थे। अक्सर फोन पर ही हमारे दोनों के बीच भोपाल-दिल्ली के समाचारों का आदान-प्रदान होता रहा, जिस अवधि में यात्रा करना उनके के लिए कठिन हो गया था। लम्बे समय से उनकी तबियत ऊपर-नीचे होते अंतिम दिन कुछ बढ़ी थी। यों श्री बापना अध्ययनशील और चुस्त-दुरुस्त जीवन जीते रहे। उनके जीवन-वृत्त से पुष्ट होता है कि वे राज्य एवं केन्द्र सरकार के उच्च अधिकारी पदों पर एक जिम्मेदार, कर्मठ, कुशल प्रशासक और पैनी कलम के लेखक रहे। अभी दो वर्ष पूर्व ही हमारे आग्रह पर प्रकाशित छोटी-सी सचित्र पुस्तक 'यादों के झरोखे से : कुछ ऐतिहासिक संस्मरण' एक शालीन और शरीफ व्यक्तित्व के बहुत ही जिम्मेदार अधिकारी के मूल्यवान, असामान्य ऐतिहासिक महत्व के जीवन अनुभवों का खजाना है। पुस्तक का आमुख श्रीमती बिनय षडंगी राजाराम द्वारा लिखा गया है। संलग्न : पुस्तक के प्रथम एवं अंतिम आवरण के विवरण : 1. आवरण चित्र में प्रथम गणतंत्र दिवस की झाँकियों की प्रथम पुरस्कार-ट्रॉफी पं. जवाहरलाल नेहरु से प्राप्त करते मध्यप्रदेश दल के प्रमुख सक्रिय सदस्य पगड़ीधारी श्री मनोहर गोधने और बीच में प्रमुख अधिकारी मान. श्री देवीलाल बापना। 2. अंतिम आवरण पर श्री बापना का सचित्र परिचय। – **प्रो. राजाराम, कलाकर्मी**–आलोचक, भोपाल।

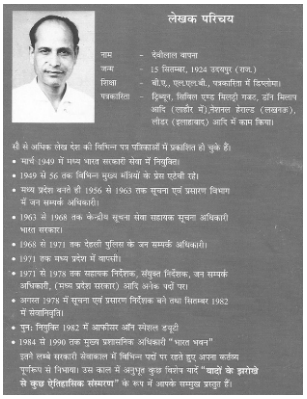

ठोका पकड़े मेरी जकड़ी अंगुलियों को जब उन्होंने खोला!

बीते बरस मध्यप्रदेश ने कई बड़ी उम्र के नामी रूपांकन कलाधर्मियों को खो दिया। व्यापक भारतीय परिक्षेत्र से बड़ौदा के जाने-माने संगतराश आधुनिक शिल्पी नागजी भाई पटेल का 15 दिस. 2017 को निधन हुआ। अक्सर भोपाल आते रहने से मध्यप्रदेश से भी वे सुपरिचित थे। सरल स्वभाव, मंद मुस्कान, मृदु एवं अल्पभाषी नागजी भाई की वह पत्थर की टंकार अब खो गयी है। ब्रांकुसी के भ्रूणवत सरलीकृत और साफ-सुथरे संगमरमरी रूपाकारों की नागजी भाई के छोटे-बड़े पत्थरों में रूपाकारों की छवि ने उनके समकालीन और युवाओं को खूब लुभाया। प्रख्यात मूर्तिकार प्रो. शंखो चौधरी के निर्देशन में विकसित बड़ौदा स्कूल के वे निपुण प्रतिनिधि शिल्पकार थे। नजदीक से नागजी भाई को काम करते देखने-समझने का मुझे पहला अवसर तब मिला जब मैं स्वयं विगत मध्य-सत्तरवें दशक में बड़ौदा की विश्व प्रसिद्ध ललितकला संकाय में 'पी.जी.आर्ट क्रिटिसिज्म कोर्स' का छात्र रहा। मुझे व मेरे दो शिल्पी 'रूममेट' मित्रों बलबीरसिंह कट्ट और रमेश नूतन को रोज ही संकाय परिसर में उनकी संगत पाने का मौका मिल जाता था, जहाँ वे शिल्प-स्टूडियो भवन के सामने खुले में पत्थरों से दो-दो हाथ कर रहे होते थे। संयोग कि मुझे इन्हीं दिनों में मेरे प्रायोगिक शिल्पाभ्यास के क्रम में 'कार्विंग' का अनुभव लेना था और इसीलिए मैंने उनके पास ही अपना ठीया जमा लिया था। नागजी भाई सुबह 8 से 12 के प्रायोगिक 4 घंटे दम साधे सतत कभी संगमरमर तो कभी दीगर कठोर पत्थर पर छैनी-हथौड़ा चलाते थे। ऐसे परिश्रमी सिद्ध-साधक की मिसाल पर अपने पहले ही दिन पूरे 4 घंटे मैंने 'वुड-ब्लाक' पर अपना लकड़ी का ठोका और चोरसी

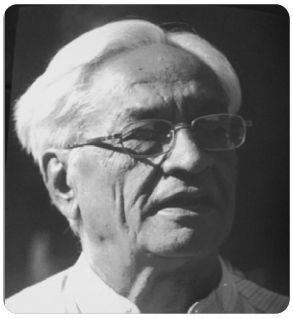

अविराम चला दिए। शुरुआत के लिए मुझे लकड़ी का, वह भी मुलायम 'हल्दू' लकड़ी का ब्लाक तराशने को दिया गया था। 12 बजे नागजी भाई ने काम रोक कर अपने औजार रखे तो मैं भी रुका। परन्तु मेरे हाथों से ठोका-चोरसी ही नहीं छूटे। लाचार उन्हीं जकड़े हाथों से मैं नागजी भाई केपास पहुँचा। मुस्कुराते हुए मेरी जकड़ी अंगुलियाँ खुलवाकर लकड़ी का ठोका और चोरसी ठिये पर रखते हुए नागजी भाई मुझसे बोले- ''पहले दिन ऐसा ही होता है''। ऐसा कहकर मेरे जैसे नौसिखिये का उन्होंने उत्साह ही बढ़ाया। आज उनके न रहने के बाद भी मेरी स्मृति में यह घटना जस की तस जीवंत है। उनका नाम, स्मृति और उनके तराशी कलात्मक पाषाण कृतियाँ काल की गति पर स्थापित नागजी भाई पटेल के चिरस्थायी स्मारक हैं। - **प्रो. राजाराम, कलाकर्मी**-आलोचक, भोपाल।

फिल्म अभिनेत्री : श्रीदेवी
जन्म : 13 अगस्त 1963, शिवकाशी
निधन : 24 फरवरी 2018, दुबई
श्रीदेवी एक भारतीय फिल्म अभिनेत्री थीं, जिन्होंने तमिल, मलयालम, कन्नड, तेल्गु, और हिन्दी सिनेमा में काम किया था। भारतीय सिनेमा की पहली 'महिला सुपरस्टार' कही जाने वाली श्रीदेवी ने पाँच फिल्मफेयर एवं पद्म श्री पुरस्कार भी प्राप्त किये।

सूफी गायक : प्यारेलाल वडाली
निधन : 9 मार्च 2018, अमृतसर
पंजाब में अमृतसर के पास एक छोटे से गाँव में वडाली डोगरा के रहनेवाले वडाली ब्रदर्स ने दुनिया भर में अपनी गायिकी के लिए मशहूर थे। आप दोनों भाइयों ने सूरदास, कबीर, अमीर खुसरो, बुल्ले शाह के पदों को अपने संगीत और गायिकी में पिरोया। आपने कई भजन, ग़ज़ल, कॉफियाँ गायी हैं, अब यह जोड़ी बिछड़ गई हैं। छोटे भाई प्यारेलाल वडाली अब इस दुनिया में नहीं रहे।

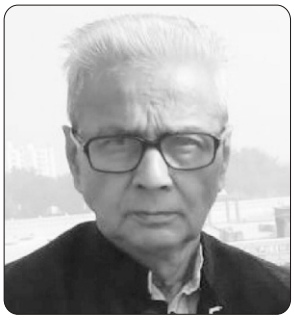

वरिष्ठ कवि : केदारनाथ सिंह
जन्म : 7 जुलाई 1934 बलिया (उत्तरप्रदेश)
निधन : 19 मार्च 2018 नई दिल्ली
केदारनाथ सिंह हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि व साहित्यकार थे। वे अज्ञेय द्वारा सम्पादित तीसरा सप्तक के कवि रहे। समकालीन भारतीय कविता के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर केदारनाथ सिंह को वर्ष 2013 में (49 वां)ज्ञानपीठ सम्मान से नवाजा गया। आप हिन्दी कविता के अग्रणी कवि है। केदारनाथ सिंह उम्दा कवि होने के साथ-साथ गंभीर शोधकर्ता भी रहे हैं।

सभी महान आत्माओं को कला समय परिवार की ओर से भावसिक्त श्रद्धांजलि

राष्ट्रीय कालिदास सम्मान से सम्मानित कलाकार

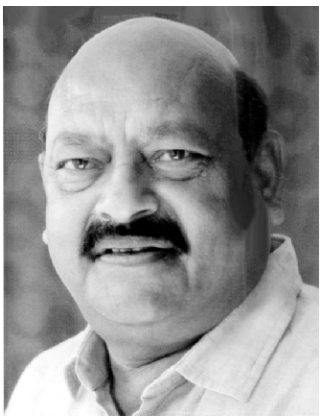

- रॉबिन डेविड

मध्यप्रदेश में मूर्तिकला के महत्व और उसकी अस्मिता को पुनर्जीवित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले शिल्पकार श्री रॉबिन डेविड समकालीन मूर्तिकारों में एक बड़ा नाम है। कलाओं का घर कहे जाने वाले भारत भवन, भोपाल से पिछले दो दशक से जुड़े श्री रॉबिन डेविड ने इस बहुकला संस्थान की अन्तर्राष्ट्रीय पहचान स्थापित करवाने में अपना अमूल्य योगदान दिया है। श्री रॉबिन डेविड एक निष्णात मूर्तिकार ही नहीं एक स्थापित रंगकर्मी भी है। श्री रॉबिन ने कई महत्वपूर्ण नाट्य निर्देशकों के साथ काम किया है। श्री रॉबिन ने कई बड़े नाटकों के लिए मंच सज्जा का महत्वपूर्ण कार्य भी किया है।

03 अक्टूबर 1950 को राष्ट्रीय राजधानी, नई दिल्ली में जन्मे श्री रॉबिन डेविड ने वर्ष 1977 में ग्वालियर (मध्यप्रदेश) से मूर्तिकला में राष्ट्रीय पत्रोपाधि प्राप्त की। श्री रॉबिन डेविड ने आर्ट कॉलेज, ग्वालियर में मूर्तिकला प्रभाग की स्थापना करवाई और इस प्रभाग की एक अलहदा पहचान बनवाने के लिए कड़ा परिश्रम किया। श्री रॉबिन ने ग्वालियर के आर्ट कॉलेज में मूर्तिकला प्रभाग बनाने के लिए कई प्रतिष्ठित मूर्तिकारों, मूर्तिशिल्प के अध्येताओं और कला चिन्तकों को ग्वालियर में आमंत्रित किया।

श्री रॉबिन डेविड की मूर्ति शिल्प की प्रदर्शनी का सिलसिला वर्ष 1975 में ग्वालियर से आरम्भ हुआ था और वर्ष 2006 तक उनके मूर्तिशिल्पों की सत्रह एकल प्रदर्शनियों का आयोजन ग्वालियर, मुम्बई, नई दिल्ली, मकराना और भोपाल में हो चुका है। नई दिल्ली में वर्ष 1978 की राष्ट्रीय मूर्तिकला प्रदर्शनी, भारत भवन-भोपाल के उद्घाटन के अवसर पर आयोजित प्रदर्शनी, भारतीय कला की समकालीन द्वैवार्षिक मूर्तिकला प्रदर्शनी और ग्वालियर व नई दिल्ली के कला मेलों में भी श्री रॉबिन के मूर्तिशिल्प का प्रदर्शन हुआ। श्री रॉबिन डेविड को वर्ष 1986 से वर्ष 2015 तक कई प्रतिष्ठित अवार्ड प्राप्त हुए। भारत भवन की मूर्तिकला द्वैवार्षिकी में वर्ष 1986 में श्री रॉबिन डेविड को पहला अवार्ड मिला था। टोक्यो (जापान) की मुशिहासिनो यूनिवर्सिटी के विजिटिंग प्रोफेसर बनने का गौरव भी श्री रॉबिन को प्राप्त है। भारत सरकार, मानव संसाधन मंत्रालय की सीनियर फैलोशिप और मूर्तिकला के लिए राज्य-स्तरीय शिखर सम्मान भी श्री रॉबिन डेविड को मिल चुके है। श्री रॉबिन डेविड ने राजभवन भोपाल, मध्यप्रदेश भवन-नई दिल्ली, भोपाल स्थित रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया के भवन और स्टेट बैंक के इन्दौर व भोपाल मुख्यालयों की अन्तर्सज्जा भी की है। मध्यप्रदेश शासन ने श्री रॉबिन डेविड को शिल्प सृजन के क्षेत्र में सुदीर्घ साधना, सूक्ष्म संवेदन दृष्टि, गहन बोध और निरन्तर सक्रियता के साथ श्रेष्ठ प्रतिमानों के लिए राष्ट्रीय कालिदास सम्मान(रूपंकर कलाएँ) वर्ष 2015 से सादर विभूषित किये गये।

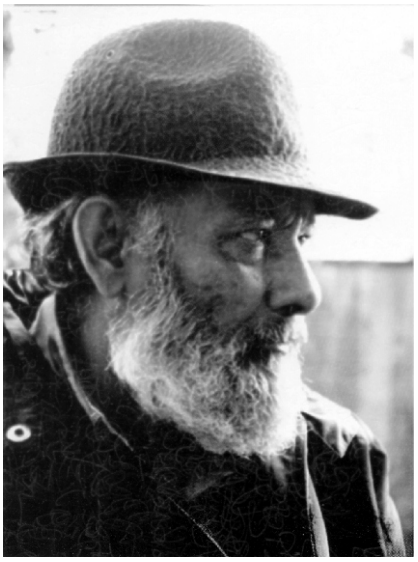

- हरचन्दन सिंह भट्टी

सुप्रतिष्ठित चित्रकार एवं कला परिकल्पक श्री हरचन्दन सिंह भट्टी का जन्म 20 अप्रैल 1959 को वर्तमान उत्तराखण्ड की राजधानी देहरादून में हुआ। चित्रकला में स्नातक की शिक्षा ललित कला महाविद्यालय- इन्दौर से प्राप्त की। देश और दुनिया में अपनी प्रकृति के अनूठे बहुकला केन्द्र भारत भवन की स्थापना से जुड़े और तबसे यहीं कार्यरत हैं।

श्री भट्टी को सुप्रतिष्ठित चित्रकार स्वर्गीय जगदीश स्वामीनाथन के मार्गदर्शन में मध्यप्रदेश के अलग-अलग जनजातीय बहुल क्षेत्रों में जनजातीय जीवन को नजदीक से देखने-समझने और प्रलेखन करने का अवसर प्राप्त हुआ, जो इनके सोचने-समझने और अभिव्यक्ति शैली का अहम हिस्सा ही बन गया।

अपनी प्रस्तुति विशिष्टता में विश्वविख्यात भोपाल में स्थापित 'मध्यप्रदेश

जनजातीय संग्रहालय' के कला संयोजनकर्त्ता श्री हरचन्दन सिंह भट्टी ने जनजातीय जीवन और उसके दैनंदिन व्यवहार की वस्तुओं का एक संग्रहालय के सन्दर्भ में किस तरह उपयोग हो सकता है, इसके नये आयाम रचे हैं। इस रचनाशीलता से संग्रहालय विज्ञानी आश्चर्यचकित हैं और संग्रहालयों की प्रस्तुति में सजीवता लाने के क्षेत्र में पुनर्विचार करने को मजबूर भी हुए हैं। पिछले तीन दशकों से मध्यप्रदेश शासन के संस्कृति विभाग द्वारा आयोजित राष्ट्रीय और राज्य स्तरीय प्रतिष्ठित समारोहों, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियों और शिविरों की भव्य परिकल्पना, आकल्पन और संयोजन का सर्वथा नया आयाम विकसित करने में श्री भट्टी का अविस्मरणीय योगदान है।

भारतीय ज्ञान धारा की शैव, शाक्त और वैष्णव 'त्रिवेणी' को उज्जैन में पारम्परिक और आधुनिक कलाओं तथा पुरावैभव के शिल्पों-चित्रों के समन्वित रूप में प्रदर्शित करने का एक नवीन तरीका रचा है। किस तरह से आध्यात्मिक प्रतीकों का तर्क में जीने वाले मनुष्य के लिये अर्थ अभिव्यक्त किया जाये, इसकी युक्तियाँ श्री भट्टी ने अत्यंत सरलता से ज्ञान परम्परा के प्रतीकों से ही अभिव्यक्त किया है। इसका साक्ष्य मध्यप्रदेश शासन,संस्कृति विभाग द्वारा सिंहस्थ-2016 के दौरान स्थापित कला एवं पुरातत्व संग्रहालय 'त्रिवेणी' में देखा जा सकता है। वे ऐसे अकेले और बिरले चित्रकार हैं, जो सांस्कृतिक और कला प्रतीकों के पुनर्व्यवहार की संस्कृति को विकसित करने तथा परम्परा और आधुनिकता के बीच कला सेतु का निर्माण करने में संलग्न है।

मध्यप्रदेश शासन ने श्री हरचन्दन सिंह भट्टी को चित्र और सृजन के क्षेत्र में दीर्घ अनुभव, गहरी सर्जनात्मक परख, कल्पनाशीलता के अनूठे और असाधारण रचनात्मक व्यवहार के साथ पहचान और प्रतिष्ठा के लिए राष्ट्रीय कालिदास सम्मान (रूपंकर कलाएँ) वर्ष 2016 से सादर विभूषित किया गया। साथ ही इस अवसर पर वर्ष 2013 का राष्ट्रीय कालिदास सम्मान सुश्री अंजलि इलामेनन, नई दिल्ली तथा 2014 का राष्ट्रीय कालिदास सम्मान श्री ए. रामचन्द्रन, नई दिल्ली को भी रूपंकर कलाओं के लिए दिया गया है।

कला समय की दस्तक विदिशा में

1938 में स्थापित विदिशा के गौरवशाली सार्वजनिक वाचनालय के 80 वर्ष पूर्ण होने पर जिले के विद्यार्थियों, पाठकों और सुधीजनों की उपस्थिति में दिनांक 31 जनवरी 2018 को अशीतितम: महोत्सव का भव्य आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि कवि, कथाकार, आलोचक और आईसेक्ट विश्वविद्यालय के कुलाधिपति श्री संतोष चौबे तथा विशिष्ट अतिथि युवा कवि राग तेलंग मंच पर मौजूद थे। श्री संतोष चौबे ने 'किताबों की दुनिया' विषय पर बोलते हुए लेखकों के लिए महत्वपूर्ण बातें कहीं तथा वाचनालय के लिए पचास हजार रुपए मूल्य की पुस्तकें देने की घोषणा की साथ ही वाचनालय को डिजिटल बनाने के लिए कम्प्यूटर तथा तकनीक देने की भी घोषणा की। इस अवसर पर सुविख्यात कथाकार मुकेश वर्मा ने 'कथा मध्यप्रदेश' रचनावली के सम्बंध में जानकारी दी तथा पांच हजार रुपये मूल्य का यह सेट अतिथियों द्वारा वाचनालय को भेंट किया गया । इस गरिमामय आयोजन में श्री महेन्द्र गगन, मोहन सगोरिया, सतीश कौशिक, वाचनालय समिति के अध्यक्ष डॉ विजय जैन आयोजन समिति से डॉ सुरेश गर्ग, एड डोंगर सिंह, प्रो के के पंजाबी, सुलखान सिंह हाड़ा, महेश पांडे, गोविन्द देवलिया, डॉ एस एन शर्मा, प्रमोद व्यास, राजेन्द्र सोनी, अरविंद द्विवेदी, नेहा विश्वकर्मा, संजीव साहू, शैलेन्द्र दीक्षित सहित नगर और जिले के पाठक और सुधिजन उपस्थित थे। आयोजन में क्विज और वाग्मिता के विजेता प्रतिभागियों को भी पुरस्कृत किया गया । इस अवसर पर आईसेक्ट विश्व की चर्चित पत्रिका '**इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए**' तथा कला और विचार की महत्वपूर्ण पत्रिका '**कला समय**' के नवीनतम अंकों का लोकार्पण भी सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम का बेहतरीन संचालन प्रो वनिता वाजपेयी ने किया।

मणि मोहन की फेसबुक वॉल से

कलागुरु पद्मश्री डॉ. वाकणकर पर केन्द्रित पुस्तक का लोकार्पण

भोपाल। राजधानी भोपाल में लंबे समय से रेखांकन कला संस्थान के माध्यम से बच्चों को पारंपरिक शैली की चित्रकारी की शिक्षा प्रदान कर रही प्रख्यात चित्रकार डॉ. रेखा भटनागर विश्व विख्यात कला गुरु और भीम बैठका की गुफाओं की खोज करने वाले पुरातत्ववेत्ता पद्मश्री डॉ. विष्णु श्रीधर वाकणकर की शिष्या है। उन्होंने अपने गुरु के व्यक्तित्व और कृतित्व को दस्तावेजी पुस्तक के रूप में लिपिबद्ध किया है, जिसको म.प्र. शासन के जनसंपर्क संचालनालय ने प्रकाशित किया है। इस पुस्तक में डॉ. वाकणकर द्वारा बनाये गए विविध प्रसंगों के रंगीन चित्र भी शामिल हैं। पुस्तक का लोकार्पण म.प्र. शासन के प्रमुख सचिव (संस्कृति) श्री मनोज श्रीवास्तव ने पिछले दिनों स्वराज संस्थान के सभागार में किया। समारोह की अध्यक्षता अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी वि.वि. के कुलपति आचार्य रामदेव भारद्वाज ने की। जनसंपर्क आयुक्त श्री पी.नरहरि विशिष्ट अतिथि के बतौर उपस्थित थे। म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के मंत्री संचालक श्री कैलाश चन्द्र पंत और प्रख्यात पुरातत्ववेत्ता पं. नारायण व्यास ने डॉ. वाकणकर से संबंधित संस्मरण साझा करते हुए कला और पुरातत्व के क्षेत्र में उनके अवदान की विस्तार से चर्चा की तथा पुस्तक और उसकी लेखिका डॉ रेखा भटनागर के शोधपरक लेखन की सराहना की। इस अवसर पर श्री मनोज श्रीवास्तव ने डॉ. रेखा भटनागर का सम्मान करते हुए अपने कला गुरु की स्मृतियों को पुस्तक के रूप में संजोने पर बधाई और शुभकामनाएँ दीं। लोकार्पण समारोह स्थल पर डॉ. रेखा भटनागर ने डॉ. वाकणकर की कला कृतियों की प्रदर्शनी भी लगाई। कार्यक्रम का संचालन कथाकार पत्रकार श्री युगेश शर्मा ने किया। उल्लेखनीय है कि डॉ. रेखा भटनागर भोपाल के प्रायवेट स्कूलों और अपने रेखांकन कला संस्थान के माध्यम से अब तक 2000 बच्चों को पारंपरिक शैली की चित्रकारी का प्रशिक्षण दे चुकी है। उन्होंने चित्रकला के क्षेत्र में एक अनूठी शैली विकसित की है, जिसको शब्दांकन से रेखांकन शैली के रूप में जाना जाता है। इस शैली की कलाकृति में रेखाओं के साथ-साथ शब्दों की संगत उपस्थिति भी रहती है। रपट : युगेश शर्मा

मध्यप्रदेश के वयोवृद्ध साहित्यकार डॉ. देवेन्द्र दीपक को दिल्ली में मिला 'संत रविदास सम्मान'

विगत 20 फरवरी को दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड द्वारा एक भव्य सम्मान-समारोह में भोपाल के वयोवृद्ध रचनाकार डॉ. देवेन्द्र दीपक को डेढ़ लाख रुपए सहित 'संत रविदास सम्मान' प्रदान किया गया। यह सम्मान भारत सरकार के माननीय मंत्री श्री विजय गोयल, प्रसिद्ध नाटककार श्री दयाप्रकाश सिन्हा, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल के कुलपति डॉ. बृजकिशोर कुठियाला, दिल्ली लाइब्रेरी बोर्ड के अध्यक्ष डॉ. रामशरण गौड़ के कर-कमलों से प्रदान किया गया। 31 जुलाई, 1934 को जन्मे डॉ. दीपक ने मध्यप्रदेश के विभिन्न महाविद्यालयों में लगभग 38 वर्षों तक हिन्दी विषय के प्राध्यापक के रूप में अपनी सेवाएँ दीं। वे मध्यप्रदेश ग्रंथ अकादमी और साहित्य अकादमी के निदेशक रहे और वर्षों तक 'साक्षात्कार' पत्रिका के संपादक रहे। वे मूलत: एक संवेदनशील कवि के रूप में जाने जाते हैं। कविता, नाटक, निबंध और उपन्यास आदि विधाओं में उनकी लगभग 20 पुस्तकें प्रकाशित हैं। हाल ही में प्रकाशित उनकी काव्य-पुस्तक 'गौ उवाच' को काफी पसंद किया गया। यह पुरस्कार उन्हें उनके उपन्यास 'संत रविदास की

रामकहानी' पर प्रदान किया गया है। इस उपन्यास पर केंद्रित एक मूल्यांकन ग्रंथ 'संत रविदास की रामकहानी : दृष्टि और मूल्यांकन ' प्रोफेसर डॉ. अरूण कुमार भगत के संपादन में छपी है। डॉ. दीपक को देशभर से लगभग पैंतीस पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है। उन्हें केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा का प्रतिष्ठित 'गणेश शंकर विद्यार्थी सम्मान' भी प्राप्त हो चुका है। उनके साहित्य पर देश के कई विश्वविद्यालयों में शोध कार्य भी हुए हैं। इस कार्यक्रम में सात अन्य विशिष्ट साहित्यकारों और छह अन्य पत्रिकाओं के संपादकों को भी सम्मानित किया गया। इस सम्मान-समारोह में दिल्ली से प्रकाशित सुलभ इंटरनेशनल की साहित्यिक त्रैमासिक पत्रिका 'चक्रवाक्' को एक लाख रूपए सहित श्रेष्ठ पत्रिकाओं का प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया। इस पत्रिका के प्रधान संपादक पद्मभूषण डॉ. विन्देश्वर पाठक हैं और संपादक आचार्य निशांतकेतु सुलभ की ओर से यह पुरस्कार डॉ. अशोक कुमार ज्योति ने ग्रहण किया, जो पत्रिका के सहायक संपादक है। साहित्यिक समाज में 'चक्रवाक्' पत्रिका की उसके विशिष्ट संपादकीय शोध-आलेखों, निबंधों, सामाजिक लेखों और शुद्ध वर्तनी के लिए विशेष प्रतिष्ठा है।

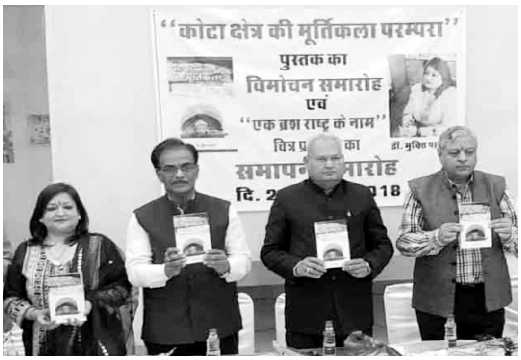

''कोटा की मूर्तिकला परम्परा'' का विमोचन

कोटा (राज.) में 'कोटा की मूर्तिकला परम्परा' सचित्र एवं सन्दर्भ युक्त ग्रन्थ का विमोचन कला दीर्घा भवन में किया गया विमोचन समारोह में अनेक विद्वान एवं मीडिया कर्मी तथा कला जगत से जुड़े उपस्थित कई विद्यार्थी थे। इस अवसर पर ग्रन्थ लेखिका एवं कला विशेषज्ञ डॉ. मुक्ति पाराशर ने ग्रन्थ का परिचय देते हुए कहा कि इसमें शैव, वैष्णव, शाक्त, बौद्ध और जैनधर्म की अनेक मूर्तियों का सम्यक विवेचन चित्रों सहित समाहित किया गया है। जिसमें मूर्ति लक्षणों को पढ़कर आम पाठक भी मूर्तिकला विज्ञान को सहजता से समझ सकता है। विमोचन समारोह के मुख्य अतिथि कोटा विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. पी.के.दशोरा ने कहा कि यह सचित्र ग्रन्थ एक ऐसा मानक ग्रन्थ है जिससे कोटा परिक्षेत्र का कला वैभव देशभर में प्रसारित होगा। समारोह के अध्यक्ष ज्ञानचन्द जैन ने कहा कि इस कला ग्रन्थ में सभी धर्मों की मूर्तिकला का विवेचन होने से यह अत्यन्त प्रभावी एवं उपादेयी है। विशिष्ट अतिथि इतिहासकार प्रो. हुकमदादा जैन ने कहा कि यह ग्रन्थ हाड़ौती की मूर्तिकला का ऐसा भण्डार है जिसके माध्यम से निरन्तर कला पर शोध की संभावना बनेगी। इस अवसर पर हाड़ौती उत्सव समिति के सहसंयोजक उद्धवदास मरचूनिया, कला विशेषज्ञ डॉ. शालिनी भारतीय, एडवोकेट पं. सुरेश शर्मा, रविन्द्र शर्मा ने भी विचार व्यक्त किये। रपट - ललित शर्मा

'राजर्षि संत पीपाजी' पुस्तक का विमोचन

राजस्थान के जाने माने इतिहासकार ललित शर्मा (झालावाड़) के सद्य: प्रकाशित 'राजर्षि संत पीपाजी' ग्रन्थ का विमोचन पुष्टि महोत्सव के तहत झालरापाटन के द्वारकाधीश मन्दिर में सम्पन्न हुआ। ग्रन्थ का विमोचन वल्लभ सम्प्रदाय के पीठाधीश्वर बड़ोदरा (गुजरात) के गोस्वामी द्वारकेशलाल जी महाराजश्री ने करते हुए कहा कि - मध्ययुगीन भारतीय समाज में विशेषकर पश्चिम भारत के राजपूताना, गुजरात, सौराष्ट्र एवं मालवा में वैष्णव भक्ति का 15 वीं सदीं में प्रसार करने का प्रथम श्रेय महान संत पीपा को जाता है। वे भारत की एक ऐसी विभूति थे जो संत और समाज सुधारक थे। उन्होंने कहा कि- गुजरात में संत पीपाजी का बड़ा नाम है और इस ग्रन्थ के द्वारा वे वहां पीपाजी के इतिहास, अध्यात्म और जनजागरण के कार्यों की साधनागत भूमिका को पुनर्स्थापित करेगें। इस अवसर पर महाराजश्री ने ओपरना ओढ़ाकर ललित शर्मा को सम्मानित किया। विमोचन के अवसर पर बड़ी संख्या में पत्रकार, बुद्धिजीवी, उद्योगपति, राजनेता और सैकड़ों वैष्णव परिवार उपस्थित थे। रपट - मुरली मनोहर प्रजापति, अध्यक्ष व्यापार संघ, झालरापाटन।

होली के रंग आपके संग

मधुवन संस्था द्वारा 4 मार्च 2018 को मानस उद्यान लालघाटी में बिजूका सम्मान से सम्मानित वरिष्ठ पत्रकार, कवि श्री महेश श्रीवास्तव, संस्कृति व समाजसेवी श्री बाबूलाल गौर, रंगकर्मी व फिल्मकलाकार श्री राजीव वर्मा तथा पद्मश्री व्यंग्यकार डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी को बिजूका सम्मान से सम्मानित किया गया। इस अवसर पर सांस्कृतिक आयोजन पर गुलाल, ठंडाई सहित मालवा भोज का भी आयोजन रखा गया। मधुवन संस्था के सचिव सुरेश तांतेड़ के अनुसार इस अवसर पर सभी संस्था के शुभचिन्तक लोगों ने अपनी भागीदारी दी तथा सांसद श्री आलोक संजर तथा पद्मश्री वरिष्ठ पत्रकार श्री विजय दत्त श्रीधर विशेष रूप से मौजूद थे।

'एक ब्रश राष्ट्र के नाम' : अतिथि चित्र प्रदर्शनी

कला समय संस्था तथा स्वराज संस्थान संचालनालय, संस्कृति विभाग, म.प्र. शासन के संयुक्त तत्वावधान में **'एक ब्रश राष्ट्र के नाम'** अतिथि चित्र प्रदर्शनी का स्वराज भवन वीथि भोपाल में 20 मार्च से 21 मार्च दो दिवसीय आयोजन संपन्न हुआ। कोटा राजस्थान की संस्था ''हाड़ौती आर्टिजन डेवलपमेंट सोसायटी'' से सम्बद्ध लगभग 50 चित्रकारों ने 1857 से 1947 की अवधि के सभी प्रमुख स्वतंत्रता सैनानियों की पेंटिंग्स बनाई हैं। कोटा की डॉ. मुक्ति पाराशर इस चित्र श्रृंखला की संयोजक है, वे प्रदर्शनी के माध्यम से इन चित्रों को सभी प्रदेशों में ले जाकर नई जेनरेशन को स्वतंत्रता संग्राम सैनानियों से आधुनिक संदर्भों में जोड़ना चाहती है। 20 मार्च को इस कला प्रदर्शनी का प्रो राजाराम कलाकर्मी-आलोचक तथा श्रीराधेलाल बिजघावने साहित्यकार ने कला प्रदर्शनी का शुभारम्भ किया। इस अवसर पर डॉ. देवेन्द्र दीपक, रमेश जैन नूतन, बिनय राजाराम, संजय यादव, प्रदीप अग्रवाल, जया आर्य, ज्योत्सना दीक्षित, रमा यादव, कला समय संस्था के सचिव भँवरलाल श्रीवास एवं सुन्दर लाल प्रजापति, सजल मालवीय उपस्थित थे। 21 मार्च को अवयस्क विद्यार्थियों की 'चित्रांकन-विनोद' नाम से 'बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ' एवं 'स्वच्छ भारत-स्वस्थ भारत' थीम पर आधारित चित्रांकन गतिविधि संपन्न हुई। सभी सम्मलित विद्यार्थियों को कला समय संस्था की ओर से प्रमाण पत्र वितरित किये गये।

आपके पत्र

प्रिय भाई, सस्नेह नमस्कार। कला समय का दिसंबर 2017 जनवरी 2018 अंक प्राप्त। आभार। कला समय-कलात्मक संवेदनाओं की पत्रिका है। जो साहित्य, कला संगीत के विकास में अनवरत रूप से हिस्सेदारी लेकर कला साधना को संपूर्णता प्रदान कर रही है। कला समय कला, साहित्य, संगीत नाद के क्षेत्र में अपना संपूर्ण जीवन समाप्त करने वालों की कलात्मक उत्कृष्टता की उपलब्धि का सम्मान करती है। इसमें भारतीय एवं विदेशी साहित्य, कला, संगीत के समन्वय रूप को स्वीकार ने की उत्कंठा है। पत्रिका कलाकारों, संगीतकारों, साहित्यकारों को प्रोत्साहित भी करती है। कला समय पत्रिका के इस अंक में मूर्धन्य तबला वादक पं. किरण देशपांडे के तबला वादक की कला संवेदना, कला रूप पर जो आलेख प्रस्तुत किया है, वह उनकी तबलावादन के कौशल खूबी, खासियत की श्रेष्ठता को प्रस्तुत करता है। तबला वादक पं. किरण देशपांडे से राग तेलंग द्वारा लिया गया इंटरव्यू बहुत सी तबलावादन की गुणात्मकता के छिपे रहस्य को उजागार करता है। डॉ. लाल रत्नाकर के चित्र आधी आबादी के केन्द्र को लेकर बनाये गये हैं, जो पूर्ण आबादी की सृजनात्मक संवेदना के है। उनमें मानवीय दुखी संवदेनाओं को ईमानदारी से प्रस्तुत किया है। खासकर ग्राम एवं लोक भावनाओं के सम्मान में भारतीयता की पहचान प्रस्तुत हुई है। जगन्नाथ प्रसाद चौबे 'वनमाली' की कहानी 'जिल्दसाज' बहुत ही उत्कृष्ठ है। जिल्दसाज के स्वभाव एवं चरित्र के साथ कर्तव्यबोध को प्रभावी ढंग से वनमाली जी ने प्रस्तुत किया है। कैप्टन-विश्वास राय से लक्ष्मीकांत जवणे की बातचीत से हवाई उड़ानों की तकनीक एवं जोखिम को सजगता के साथ प्रस्तुत किया है तो श्रम, साहस का कार्य है। झालावाड़ की नाट्यशाला पारसी शैली की वास्तुकला का अद्वितीय नमूना है। इस संबंध में ललित शर्मा का आलेख झालावाड़ की भवानी नाट्य शाला विश्व रंग-मंच की धरोहर है। 'लोकभाषाओं और लोक गीतों का महत्व' आलेख लोक जीवन को यथार्थपरक छाया बिम्ब दर्शाता है। स्मृति शेष में नागजी-पटेल की मूर्तिकला की कलात्मक बोध की खूबी खासियतों से मूर्तिकला को नई शैली की खोज को ताकत मिलती है। कला समय पत्रिका निश्चित ही आधुनिकता की दौड़, उम्मीदों, चिंतन के साथ दौड़ती है, जो थकानों और विवशताओं के छाया बिम्बों को प्रस्तुत करती है। पत्रिका कला संवेदना की उम्मीदों को संजोती है। शुभेच्छा सहित। सस्नेह! - **राधेलाल बिजधावने,** भोपाल (म.प्र.)

प्रणाम सर, मैं कला का अकिंचित विद्यार्थी हूं। कला समय का अंक प्राप्त हुआ, एक बेहतरीन पत्रिका के लिए इससे जुड़े सभी सर्जकों को हार्दिक बधाई। मैं आपको विशेष रूप से बधाई और धन्यवाद प्रेषित करता हूं कि एक अरसे बाद 'कला निकष' के रूप में अभिभूत कर देने वाली हद तक का चिंतनपरक लेख पढ़ने को मिला, वस्तुत: मेरे जैसे कला जिज्ञासु विद्यार्थी के लिए दिसंबर जनवरी अंक का कला निकष अनेक प्रकार की समृद्धियां लाता हुआ अनुभूति में रम गया है। उत्तर आधुनिकता के सर्वाधिक संभावना वाले फलक को आपने गहन मर्मज्ञता से प्रस्तुत किया है, ए आई का विश्लेषण कला अथवा साहित्य के जिस वितान में होना चाहिए ,वह पहली बार आपके आलेख में देखने को मिला, कला साहित्य और दर्शन का यह विद्यार्थी आपका मुरीद हुआ, मेरे इस भावावेश का कारण आपके लेख का दिशाबोधक सामर्थ्य है। सादर! -**चेतन औदिच्य**, उदयपुर (राजस्थान)

अपने गृह प्रदेश से प्रकाशित 'कला समय' से रुबरु होने का अवसर मिला। यह पत्रिका कला के बहुआयामी प्राकृतिक रंगों एवं साहित्यिक/ वैचारिक कृतियों का अद्भुत किंतु अनुपातिक सम्मिश्रण है। कला और वैचारिक केनवास पर उभरे बेहद चित्ताकर्षक एवं युगबोध कराते रंगों(नामों) से भरपूर, मुखपृष्ठ से अंतिम पृष्ठ तक अपने नाम की सार्थकता सिद्ध करती रचनाओं से सुसज्जित है। श्री भंवरलाल श्रीवास जी और अत्यंत प्रौढ़, गंभीर, सुस्पष्ट विचारक एवं विशिष्ट लेखन शैली के लिए प्रसिद्ध भाई लक्ष्मीकांत जवणे द्वय की कलम से तराशी हुई यह पत्रिका के पन्नों से अपने आप को जोड़ना मेरे लिए एक सुखद अनुभव है। प्रदेश की नैसर्गिक व ऐतिहासिक कला और मौलिक विचार संपदा को समाज में गरिमा पूर्ण स्थान प्रदान करवाने में आप दोनों महानुभावों के प्रयास स्तुत्य हैं। मैं इस

पत्रिका के उज्जवल भविष्य के पगचापों को स्पष्ट रूप से सुन पा रहा हूँ। पत्रिका परिवार से सानिध्य की कामना के साथ, हार्दिक शुभकामनाएं। - **गणेश प्रसाद मालवीय,** -मुंबई, महाराष्ट्र।

समय-पटल पर अंकित कला के चिह्न,जो बरबस ही कलानुरागी मन को अपनी ओर आकर्षित करते हैं, उन्हें धूल-धूसरित होने से बचाकर जनमानस के समक्ष प्रस्तुत करना 'कला समय' का स्तुत्य कार्य है। 'कला समय' कला-यात्रा की साक्षी है जिसमें विभिन्न कलाओं के बीज-स्वरूप को खोजने का सराहनीय कार्य सतत किया जा रहा है। कला के अतीत,वर्तमान व भविष्य के सम्भावी स्वरूप पर 'कला समय' की पैनी दृष्टि है। रुचि, रस व कला-बोध का अनुपम संगम है 'कला समय' जिसमें कला मूर्त रूप धारण कर पाठक को आत्म-विस्मृत कर देती है। यह मेरा परम सौभाग्य है कि दो-दो कर्मठ व सशक्त कलमकार श्री लक्ष्मीकांत जवणे तथा श्री सजल मालवीय मेरे अन्तरंग मित्र हैं और यह भी सुखद संयोग ही है कि ये दोनों साहित्यकार अपनी पूरी ऊर्जा के साथ 'कला समय' के समर्पित, कला-पारखी सम्पादक श्री भँवरलाल श्रीवास जी के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर 'कला समय' को निखारने में लगे हुए हैं। विषय की गहराई में उतरकर तल से मोती खोज लाने में लक्ष्मीकांत जी को महारत हासिल है। प्रमाण है उनका 'कला निकष' लेख उन्होंने महान कलाकार 'पाब्लो पिकासो' के दो कलाकारों के प्रति व्यक्त कथन पर गहन चिंतन कर दोनों के प्रयासों को सार्थक कहा है। उनके अनुसार दोनों कलाकार तेज चलती बस या रेल से सूरज को ओझल होते हुए देखते हैं। गति के प्रभाव से उस रोशनी-पुंज की प्रखरता को एक कलाकार ने धूसरित होते हुए महसूस किया, गति द्वारा दीप्ति को जकड़ते देखा तो उसके लिए सूरज एक धूरियाया धब्बा है। दूसरे ने दीप्ति को गति से अपराजित माना .....समयावधि ही है। मुझे यहाँ जवणे जी का इशारा कलाकारों द्वारा उठाए जा रहे नए कदमों की ओर देखने व चिंतन करने का आग्रह करता-सा जान पड़ता है। यही है कला की खोजी दृष्टि। आदरणीय अमृतलाल वेगड़ जी ने तो मुझे अपने गाँव ही पहुँचा दिया। मुझे लगा कि मैं ही अपने छोटे-से गाँव की छोटी-सी भजन-मंडली में बैठा झूम-झूमकर तालियाँ बजा रहा हूँ। ढोलकिया भी पूरे जोश-खरोस से ढोलक बजा रहा है। लोकनृत्य देखकर पाँव थिरक उठते हैं मेरे। मैं ही तो कस्बे की हाट से प्रेमचंद के 'हामिद' की तरह चिमटा खरीद रहा हूँ। वह मेरे ही गाँव की महिला है जो कच्चे कुँए से पानी खींच रही है.और .....वेगड़ जी तथा उनकी कलम,दोनों को नमन जिनका लेखन व चित्रांकन समान रूप से जीवंत हैं। रंगमंच की कला को निखारने के लिए अपना सर्वस्व निछावर कर देने वाले फक्कड़ व संघर्षशील कलाकार श्री प्रेम गुप्ता जी को शत-शत नमन। सुनिल मिश्र जी लिखते हैं ''आमद से अधिक खर्च करने में अग्रणी और हर बार मिले से अधिक खपा देने वाले ये शख्स जब मिले, हाथ झाड़े ही मिले। 'वे आगे लिखते हैं' गुप्ता जितना खटे हैं वह सबकुछ होम कर देने के बाद प्राप्त होने वाले आत्मसुख का अकेला साक्ष्य है।....उन्होंने आत्मसंघर्ष में आत्मसुख प्राप्त करने का एक तरह से जीवनभर का जोखिम लिया।'' गुप्ता जी के व्यक्तित्व से प्रमाणित होता है कि संघर्ष की रगड़ से ही आग या चमक पैदा होती है। 'महिला प्रतिभाएँ वक्र रेखाओं में' श्री निर्मिश ठाकर जी का महिलाओं के प्रति सम्मान व समर्पण निश्चित ही ध्यान आकर्षित करता है। अच्छा होता यदि देश-विदेश के ख्यातिनाम कुछ और कलाकारों के साक्षात्कार अथवा लेखादि का समावेश 'कला समय' में किया जाता। - **डॉ. दौलतराव वाढ़ेकर,** नागपुर (महाराष्ट्र)

आदरणीय भँवरलाल जी श्रीवास, नमस्कार । 'कला समय' (दिसम्बर-जनवरी 2018) कल ही मिली। आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। पत्रिका को देखने-पढ़ने का यह मेरा पहला मौका है। पत्रिका मुझे इस माने में अनूठी लगी कि इसमें कला के विविध रूपों यथा चित्रकला, शिल्पकला, संगीत, कहानी, कविता सभी पर यथोचित विचार किया जाता है और सम्बंधित कला सृजन को स्थान दिया जाता है। यह भी सुखद है कि यह 1998 से निरंतर निकल रही है। कला जगत की हलचल का भी पता पत्रिका से चल जाता है। निश्चित ही यह महती कार्य है। इसके लिए 'कला समय' के संपादक मंडल और पूरी टीम को मैं हार्दिक बधाई देता हूँ। भविष्य के लिए भी अशेष शुभकामनाएँ। 'कथा निरंतर' में वनमाली जी की कहानी 'जिल्दसाज' बहुत अच्छी कहानी लगी-सुगठित और मर्मस्पर्शी ।इस कहानी में वनमाली जी ने जिल्दसाज और गुलशन के चरित्र को बहुत कम शब्दों में बहुत ऊँचा उठा दिया है ।कथा का सहज विकास हुआ है ।इस मायने में यह अनूठी कहानी है, जो आगे भी याद रखी जाएगी ।सभी स्तम्भ सार्थक हैं ।वाकई पत्रिका में आपकी दृष्टि और श्रम नजर आता है ।सादर - **गोविन्द सेन,** धार (म.प्र.)

संस्था समाचार

संस्कृति पर्व-2
कला समय संस्था का प्रतिष्ठापूर्ण आयोजन

9 मार्च 2018 को भोपाल के प्रतिष्ठित सभागार समन्वय भवन में कला समय संस्कृति, शिक्षा और समाज सेवा समिति द्वारा संगीत पर केंद्रित बहुप्रशंसित आयोजन संस्कृति पर्व-2 संपन्न हुआ। कार्यक्रम वस्तुत: सांगीतिक मूल्यों के पुनर्जागरण का एक सद्प्रयास था और इस आयोजन की म.प्र.के लब्ध-प्रतिष्ठ कला रसिकों ने मुक्त कंठ से सराहना की। यह न सिर्फ कला समय की हौसला अफ़ज़ाई है अपितु हमारे छोटे से उपक्रम की सार्थकता भी। आप सब पाठकों के प्रति सद्भाव प्रकट करते हुए प्रस्तुत है आयोजन में पधारे माननीय अतिथियों ने अविकल उद्बोधन दिये। पद्मश्री रमेशचंद्र शाह, श्री नर्मदा प्रसाद उपाध्याय, श्री मनोज श्रीवास्तव, श्री किरण देशपांडे, पलाश सुरजन। कार्यक्रम की उद्घोषक सुश्री पिंकी तिवारी (मिर्ची 98.3 एफ.एम; आर.जे.) ने किया।

'संस्कृति कंधे पर ढोई जाने वाली विरासत नहीं'

यह आयोजकों की तात्कालिक सूझबूझ ही नहीं वरन् 'कला समय संस्कृति शिक्षा और समाज सेवा समिति' का नैतिक दायित्व भी था जो उन्होंने राजधानी में 9 मार्च 2018 को अपने पूर्व निर्धारित आयोजन 'संस्कृति पर्व-2' को सूफी गायक जोड़ी वडाली ब्रदर्स के कुछ ही घंटे पहले दिवंगत हुए स्वर साधक प्यारेलाल वडाली को समर्पित कर कला जगत के मानवीय मूल्यों का मान रखा.. पहले सत्र में सर्वश्री किरण देशपांडे, पद्मश्री रमेशचन्द्र शाह, मनोज श्रीवास्तव, नर्मदाप्रसाद उपाध्याय, पलाश सुरजन आदि अतिथियों ने संपूर्ण सांस्कृतिक पत्रिका 'कला समय' और 'शिवम् पूर्णा' के सद्य प्रकाशित अंकों का लोकार्पण किया.. समिति के सचिव भँवरलाल श्रीवास ने संस्था की गतिविधियों का ब्योरा दिया.. वक्ताओं के सारगर्भित संबोधन विचारोत्तेजक रहे.. यशस्वी ललित निबंधकार नर्मदाप्रसाद उपाध्याय को किसी पत्रिका/पुस्तक के विमोचन के बजाय लोकार्पण शब्द सर्वथा उपयुक्त प्रतीत होता है, जब वे कहते हैं कि मुक्त तो देह होती है, अक्षर तो समर्पित होता है.. रंग साहित्य और संगीत मिलकर कला की त्रिवेणी बन जाती है.. आज का आयोजन (संस्कृति पर्व) इस त्रिवेणी में स्नान करने जैसा है.. मप्र के संस्कृति विभाग के शीर्षस्थ अधिकारी मनोज श्रीवास्तव का मानना है कि संस्कृति कंधों पर ढोई जाने वाली विरासत नहीं है.. खाये और अघाये लोगों की पाश्चात्य प्रेरित उत्सवधर्मिता से बहुत अलग है भारत के लोकोत्सव, लोक पर्व और मेले.. बुजुर्ग साहित्यकार पद्मश्री रमेशचंद्र शाह लड़कपन में गीताप्रेस गोरखपुर का 'कल्याण' बगल मे दबाये हॉकी खेलने जाते थे पर आज उन्हें हिन्दी का लेखक दुनिया का सबसे अभागा प्राणी लगता है.. काश संगीत की तरह साहित्य में भी रचनाकारों ने अनुशासन का पालन किया होता.. संगीत का हाजमा भी बड़ा तगड़ा है.. दुनिया जहान की प्रयोगधर्मिता को अपनाने की कुव्वत रखता है.. हर कला संगीत बनना चाहती है.. संगीत में बदतमीजी और वाहियातपन चल नहीं सकता.. काका हाथरसी ने निकाली थी देश की पहली और एकमात्र संगीत पत्रिका..! मेवाती घराने के मूर्धन्य सितार वादक उस्ताद सिराज खान मूलत: हमारे मध्यप्रदेश (इन्दौर) के ही हैं.. बेहद विनम्र और ज़हीन मिज़ाज के उस्ताद ने अपने फ़न की तालीम के साथ साथ उत्कृष्ट मानवीय गुणों के संस्कार भी अपने बेटे और शागिर्दों में बगैर किसी भेदभाव के बाँटे हैं.. पिता पुत्र की जोड़ी (उस्ताद सिराज खान और उनके बेटे असद खान) जब राजधानी के समन्वय भवन में राग बिहाग से सितार वादन की जुगलबंदी शुरू करने जा रही थी, उद्घोषिका ने मुम्बई से उनके शागिर्द द्वारा भेजा संदेश (जो कि अंग्रेजी में था) पढकर सुनाया.. संदेश को सरप्राइज आइटम के बतौर इसलिए पेश किया गया क्योंकि उसके प्रेषक थे आज की युवा पीढी के प्रतिनिधि गायक और हर दिल अजीज़ फ़नकार अरिजीत सिंह, जो कि उस्ताद सिराज खान के गण्डाबंद शागिर्द हैं.. गुरू शिष्य परंपरा के निर्वाह में कला के साथ संस्कारों का पोषण अवश्यंभावी है.. ऊंचाइयाँ छूने के लिए जड़ों तक पहुंचना जरूरी है.... जय हो.. (रपट : विनोद नागर, लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवं स्तंभकार)

झलकियाँ

संस्कृति पर्व 2 : समन्वय भवन : 9 मार्च 2018

दीप प्रज्ज्वलन :पद्मश्री रमेशचन्द्र शाह एवं श्री मनोज श्रीवास्तव

एक ब्रश राष्ट्र के नाम : स्वराज वीथि : 20-21 मार्च 2018

दीप प्रज्ज्वलन : प्रो.राजाराम, राधेलाल बिजघावने, डॉ देवेन्द्र दीपक, डॉ. मुक्ति पाराशर

कला समय पत्रिका : लोकार्पण

स्वराज वीथि में बच्चों का चित्रांकन-विनोद

शिवम् पूर्णा पत्रिका : लोकार्पण

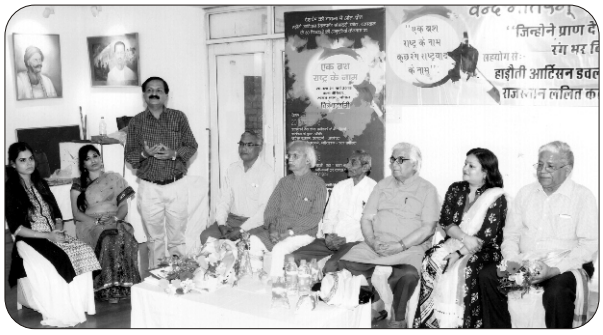

उद्बोधन : श्री संजय यादव

एकत्रित कलाकर्मियों का उत्साह

चित्रकला में बच्चों की सहभागिता तथा प्रमाण पत्र वितरण

नन्हें कलाकारों की दुनिया

यह मुन्नियों और मुन्नों का संसार हैं, इसमें किसी भी किस्म की बिना छापवाले वाले मनों की चौकड़ियाँ और कुलांचे हैं। इन नवांकुरों की भावी छलांगों की सम्भावनाओं को यह पृष्ठ समर्पित हैं-कला समय।

होनहार बिरवान के होत चिकने पात : खुशी

वैसे तो इस प्रतिभावान बालिका का नाम है ओजल वैष्णव, मगर सब इसे खुशी बुलाते हैं। जैसा नाम वैसा काम। सच में खुशी जहां कहीं भी जाती है, खुशी बिखेर देती है। आत्मविश्वास से लबरेज़ यह भोपाल की बिटिया है, शान है। हंसमुख और लावण्य से परिपूर्ण। अनेक संभावनाओं को अपने में समेटे मात्र नौ वर्ष की उम्र में इस बालिका ने भरत नाट्यम् में इतनी दक्षता हासिल कर ली है कि दॉतों तले अंगुली दबानी पड़ती है ।हाल ही में प्रतिभा की इस पुंज ने कैंपियन स्कूल भोपाल के सांस्कृतिक आयोजन में अपनी नृत्य कला की छटा बिखेरी और दर्शकों का मन मोह लिया। कला समय की ओर से इस नन्हे कला सहयात्री का अभिनंदन-शुभकामनाएं ।

बोलती दीवारें

राजधानी की मूक दीवारों को बोलना सिखाने में कला समय के युवा साथियों का भी योगदान है। इन युवा कलाकारों में शामिल हैं शिल्पी रॉय और उनकी टीम की अन्य सदस्य सोनल गुप्ता और शिवानी श्रीवास्तव। शिल्पी ने बताया कि दीवारों पर चित्रकला करना और रंग भरना एक तरह से खुद को नया करने जैसा भी अहसास है,यह सिर्फ शहर को खूबसूरत बनाने के लिए नहीं है। इन युवाओं का प्रयास है कि ऐसे कलात्मक कार्यों से लोगों में सांस्कृतिक अभिरूचि जगे और सबकी दृष्टि और व्यक्तित्व में कला का प्रवेश हो।

देह एक वस्तु नहीं है, यह एक स्थिति है, यह दुनिया पर हमारी पकड़ है और हमारी तर्कसंगत कल्पनाओं का खाका है। - सिमोन द बुवा

महिला प्रतिभाएँ वक्र रेखाओं में

- निर्मिश ठाकर

ममता कालिया

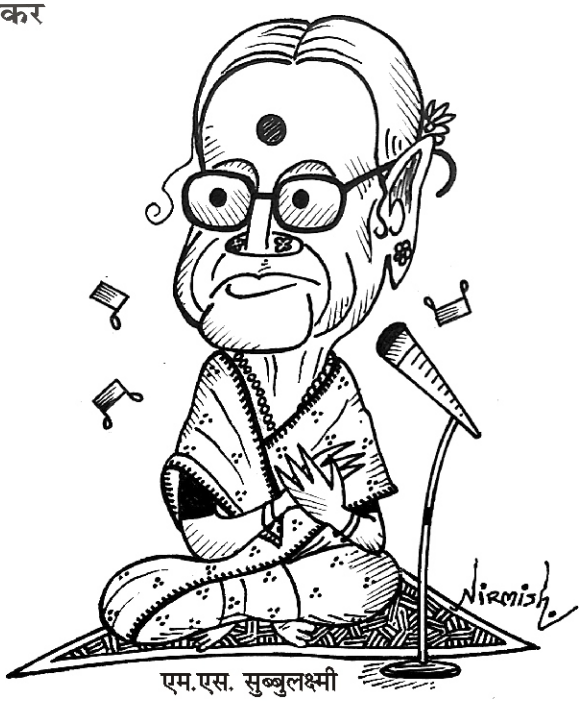

एम.एस. सुब्बुलक्ष्मी

मनुबेन गांधी

एनी बेसेंट

पहली बार श्रमिकों के लिये ऐतिहासिक योजनाएं

योजनाओं के लाभ के लिये श्रमिकों का पंजीयन 1 अप्रैल से

श्री नरेन्द्र मोदी
प्रधानमंत्री

श्री शिवराज सिंह चौहान
मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश

- गर्भवती श्रमिक महिलाओं को पोषण आहार के लिये 4 हजार रुपये। प्रसव होने पर महिला के खाते में 12 हजार 500 रुपये जमा किये जायेंगे।
- घर के मुखिया श्रमिक की सामान्य मृत्यु पर परिवार को दो लाख तथा दुर्घटना में मृत्यु पर 4 लाख रुपये की सहायता।
- श्रमिक को मृत्यु पर अंतिम संस्कार के लिये पंचायत/नगरीय निकाय से 5 हजार रुपये की नगद सहायता।
- गंभीर बीमारी से ग्रस्त श्रमिकों के लिए प्रतिष्ठित निजी अस्पतालों में इलाज की व्यवस्था। जरूरी होने पर बड़े शहरों में भी इलाज का इंतजाम।
- हर श्रमिक को मकान। तीन साल के अंदर यह काम पूरा होगा। शहरों में श्रमिकों को पक्के मकान। गांवों में श्रमिक परिवारों को भूमि के पट्टे और पक्का मकान बनाने के लिये राशि।
- श्रमिकों के बच्चों को बेहतर शिक्षा के लिये भोपाल, इंदौर, ग्वालियर और जबलपुर में पब्लिक स्कूल की तर्ज पर श्रमोदय विद्यालय।
- श्रमिकों के बच्चों की पहली कक्षा से लेकर डाक्टरेट तक पूरी पढ़ाई की फीस सरकार भरेगी। इसमें इंजीनियरिंग, मेडीकल तथा नामचीन प्रबंधन संस्थान भी शामिल होंगे।
- प्रतिष्ठित सेवाओं की प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी के लिये असंगठित श्रमिकों के प्रतिभावान बच्चों को बेहतरीन संस्थानों में निःशुल्क कोचिंग।
- स्वयं का रोजगार स्थापित करने वाले श्रमिकों को एक वर्ष का प्रशिक्षण और बैंक ऋण। ऋण पर सब्सिडी और ऋण की गारंटी सरकार द्वारा।
- हर साल एक लाख श्रमिकों को स्वरोज़गार के लिए ऋण।
- श्रमिकों को स्वरोज़गार के लिये प्रशिक्षण, ऋण पर सब्सिडी। ऋण की गारंटी सरकार लेगी।
- छोटे-मोटे कामधंधों में लगे श्रमिकों के लिए लघु अवधि प्रशिक्षण केन्द्र। इनमें अकुशल श्रमिक बनाये जायेंगे कुशल।
- साइकिल-रिक्शा चलाने वालों को ई-रिक्शा और हाथठेला चलाने वाले को ई-लोडर का मालिक बनाने की पहल। 5 प्रतिशत ब्याज अनुदान के साथ 30 हजार की सब्सिडी दी जायेगी।
- शहरों में छोटे-मोटे काम करने वालों को साइकिल के लिये चार हजार रुपये की सहायता।
- असंगठित श्रमिक परिवारों को बिजली कनेक्शन। उनसे 200 रुपये मासिक फ्लैट रेट पर बिजली।
- तेंदूपत्ता तोड़ने, महुआ के फूल एवं चिरौंजी बीनने वाली श्रमिक बहनों को चरण पादुका योजना के तहत जूते-चप्पल और प्यास बुझाने के लिये ठण्डे पानी की कुप्पी।

> आर्थिक असुरक्षा से जूझते असंगठित श्रमिक बहनो, भाइयो की बेहतरी के लिए हम संकल्पित हैं। उन्हें आर्थिक विकास के साथ ही सामाजिक बेहतरी, उनके बच्चों को बेहतर शिक्षा तथा अन्य सुविधाएं देने के लिए योजनाओं पर प्रभावी अमल किया जा रहा है।

शिवराज सिंह चौहान
मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश

शासकीय योजनाओं का लाभ लेने के लिये पंजीयन अवश्य करायें।
पोर्टल
shramsewa.mp.gov.in
पर पंजीयन करवाएं।

असंगठित श्रमिक कौन ?

कृषि मजदूर, घरों में काम करने वाले, फेरी लगाने वाले दुग्ध श्रमिक, मछली पालन श्रमिक, पत्थर तोड़ने वाले, पक्की ईंट बनाने वाले, बाजारों में दुकानों पर काम करने वाले, गोदामों में काम करने वाले, परिवहन, हाथकरघा, पावरलूम, रंगाई-छपाई, सिलाई, अगरबत्ती बनाने वाले, चमड़े की वस्तुएँ और जूते बनाने वाले, ऑटो-रिक्शा चालक, आटा, तेल, दाल तथा चावल मिलों में काम करने वाले, लकड़ी का काम करने वाले, बर्तन बनाने वाले, कारीगर, लुहार, बढ़ई तथा माचिस एवं आतिशबाजी उद्योग में लगे श्रमिक।

श्रमिक जो असंगठित, सुरक्षित उनके भी हित

मध्यप्रदेश जनसम्पर्क द्वारा जारी

/CMMadhyaPradesh /CMMadhyaPradesh

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वात्वाधिकारी भँवरलाल श्रीवास द्वारा दृष्टि ऑफसेट, 36-37, प्रेस कॉम्पलेक्स, जोन नं-1, एम.पी. नगर,
भोपाल से मुद्रित एवं जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक-भँवरलाल श्रीवास